मनकी बात।

इस प्रकारकी पुस्तक लिखनेकी मेरी इच्छा बहुत दिनोंसे थी। पर न मालुम क्यों मैं इस ओर आकृष्ट नहीं होसका। पर यह कहते आनन्द होता है कि मेरे मित्र पं० रामजीलालने इस पुस्तकके लिखनेमें मुझे बहुतही उत्तेजित किया है। यदि उनके वार वार गर्म तकाज़े न होते तो यह पुस्तक अभी तैयार नहीं होसकती थी, यह कहना बिलकुल सच है।

इस पुस्तकमें कोईभी नयी बात नहीं है। बातें सभी पुरानी हैं, पर वे कामकी हैं। जीवनके कठिन संग्राममें उत्तीर्ण होनेके लिए किन किन गुणोंकी आवश्यकता है, वह कौनसा मार्ग है जिसपर चलनेसे जीवन सफल होसकता है आदि बातोंका जानना अत्यन्त आवश्यक है। साधारण साधारण त्रुटियोंसे कितनी बड़ी बड़ी हानियां उठानी पड़ती हैं, अनुभव शून्य और कोमल मति बालकोंको जीवनसंग्राममें कितनी कठिनाइयां उठानी पड़ती हैं, कितनेही उन कठिनाइयांमें पड़कर अपना सर्वस्व नाश कर बैठते हैं कितने निराशाके घोर अंधकार में पड़कर व्याकुल होजाते हैं। क्या यह दशा किसीभी समाजके लिए हितकारक है, जिस देशके नवयुवक इस प्रकार बिटलाये और ठगे जाते हों, भला वह देश उन्नत होसकता है, क्या उस देशमें शुद्धता कार्यशीलता आदि सद्गुणोंका प्रचार होसकता है। इस प्रश्नका उत्तर मैं तथा और लोगभी यही देंगे कि नहीं।

यह स्थिति अच्छी नही, इसीको सुधारनेकी इच्छासे मैंने इस पुस्तकके सङ्कलन करनेका उद्योग किया है। मैं चाहता हूं देशके वे युवक जो मुझसे अवस्था और विद्यामें छोटे हैं

अपने जीवनके कार्य प्रारम्भ करनेके पहले मेरे विचारोंको भी सामने रख लिया करें। वे मेरे इन विचारोंको देख लें। यद्यपि उनको इन विचारोंसे पूरी पूरी सहायता मिलनेकी आशा नहीं है, तथापि इनको देखकर वे अन्य नये विचार कर सकते हैं। इन विचारोंके आधार पर वे अपने लिए अच्छे मार्ग और अच्छे उपाय निश्चय कर सकते हैं।

देशके मेरे छोटे भाइयो, तुमसे वड़ी वड़ी आशाएँ हैं। इसीसे आज मनकी वात मैंने निवेदन किया है। जीवनकी सफलताकी ओर ध्यान दो, देशमें ज्ञान विज्ञानका प्रचार करो ज्ञाननिष्ठ और कर्मनिष्ठ वनो। लोगोंकी आंखें तुम्हारीही ओर लगी हैं। वह वृद्ध शीर्ण शरीरभी तुम्हारी शक्तियोंकी ओर देखकर तुम्हारी कर्मशीलतापर विश्वासकर जीवित है। उसे निराश मत करो, उसकी निराशाही उसकी मृत्युका कारण होगी। अतएव जीवनको सिद्ध वनानेके लिए उपायोंको ढूढ़ो, उनमेंसे कुछका वर्णन इस पुस्तकमेंभी है लो, इसेभी लो, इससे तुम्हारा यदि लाभहो तो अच्छा है। भाइयो, जो मेरे पास है, वह आज आप लोगोंको वड़े आदर और उत्कण्ठासे देता हूं।

तुम्हाराही—

प्रथम अध्याय

सिद्धि क्या है

मनुष्य-जीवन कर्ममय है। बिना कुछ किये मनुष्य तो मनुष्य, पशु-पक्षी आदिको भी चैन नहीं पड़ता। सभीको कुछ न कुछ करना अवश्य पड़ता है। यह ठीक है कि सभी एक काम नहीं करते, कोई कुछ करता है और कोई कुछ करता है; परन्तु काम सभीको करना पड़ता है इस बातमें सन्देह नहीं है। मनुष्यके लिए कर्म करना कई कारणोंसे आवश्यक हो जाता है। बिना काम किये न तो खाना मिलता है और न खाया हुआ पचता है। जो लोग संसार-विरागी हैं और कर्मके त्याग करनेमें अपना महत्त्व समझते हैं। अनेक प्रकारसे कर्मकी निन्दा करके अपना जोश दिखलाया करते हैं, उनको भी बिना कर्म किये कल नहीं पड़ती। उनको भी कर्म करने ही पड़ते हैं; क्योंकि कर्मका करना स्वाभाविक है। इसी कारण भगवान् श्रीकृष्णने गीतामें कहा है—"प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति" अर्थात् यदि तुम कर्म करना न भी चाहो, यदि तुम कर्मको देख कर दूरहीसे भागना चाहो, तोभी तुम वैसा कर नहीं सकते। प्रकृति तुमको कर्म करनेके लिए दबावेगी और प्रकृतिका दबाना तुम्हारे लिए कठिन होगा। प्रकृति

तुम्हारे सामने ऐसी परिस्थिति लाकर खड़ी कर देगी जिससे विवश होकर काम करना पड़ेगा। इस बातको सभी लोग जानते हैं और वे इस पर विश्वास भी करते हैं, अतएव पढ़े लिखे और अनपढ़ दोनों प्रकारके समाजमें कर्मकी महिमा गायी जाती है।

साधारणतः हाथपैरका चलाना और उनके द्वारा किसी पदार्थके रूपमें विकार उत्पन्न करनाही काम कहा जाता है। इस प्रकार कुल्हाड़ीसे अपने घरका किवाड़ काट देना भी काम हुआ और बसूला आदिकी सहायतासे एक बाक्स बनाना भी काम है। ये दोनों काम हैं अवश्य, पर कर्मकी परिभाषा इतनेहीसे पूर्ण नहीं हो जाती अर्थात् हाथ पैर चलाकर किसी पदार्थके रूपमें नवीनता उत्पन्न करना इतना ही कर्म या कामकी परिभाषा नहीं है। यह है कामके पहले अंगका वर्णन, इसके अतिरिक्त कामका दूसरा भी अंग है। जिसका नाम है फल। कर्मकी अन्तिम अवस्थाका नाम फल है। जिस कर्ममें फल हो, वह कर्म अच्छा समझा जाता है और लोग उसी कर्मकी प्रशंसा भी करते हैं। जिस कर्ममें फल नहीं अथवा लाभदायक फल नहीं, वह कर्म कर्म नहीं है। लोग उस कर्मकी निन्दा करते हैं। निरर्थक कर्म करनेवाले पागल समझे जाते हैं; परन्तु कभी कभी ऐसा भी समय आता है, जब घर के किवाड़ काटनेसे फल होता है, किसीके प्राणोंकी रक्षा होती है, उस समय वह भी कर्म समझा जाता है। तात्पर्य यह हुआ कि कर्म नियमित नहीं है। एक समयमें जो कर्म समझा जाता है, एक समयमें जिस कर्मसे फलोंके प्राप्त होनेकी संभावना होती है और लोग बड़ी उत्कण्ठा और तत्परतासे जिस कामको

एक समय करते हैं, समय आता है सब बातें बदल जाती हैं। अब वह कर्म कर्म नहीं समझा जाता, उस कर्मसे होने वाले फलोंकी ओरसे लोगोंकी रुचि जाती रहती है। इन बातोंसे हम एक ही सिद्धान्त निश्चित कर सकते हैं और वह यह कि लाभदायक फलवाले कर्म ही कर्म हैं और वे नियमित नहीं हैं कि अमुक कर्म सदा लाभदायकही बना रहेगा। देश काल के अनुसार लाभदायक फल देने वाले कर्म कर्म हैं।

एक समय था जब यहाँके वासी सेवावृत्तिको बड़ी घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। दूसरेका हुक्म मानना उन लोगोंकी दृष्टिसे पाप था। अतएव मनुने अपने धर्मशास्त्रमें "सेवा श्ववृत्तिराख्याता तस्मात्तांपरिवर्जयेत्" कह कर उसका निषेध किया है; परन्तु आज तो वह बात नहीं है। आज तो समस्त भारत सेवा करनेके लिए ऊँची गर्दन करके खड़ा है। आज हमारी शिक्षा आदि जो कुछ है, सो सब किस लिए? आज्ञा पालने के लिए। बात यह हुई, उस समय इन लोगोंको सेवा करनेकी आवश्यकता न थी, उस समय इनकी परिस्थिति सेवा करनेके अनुकूल न थी, इस कारण उस समय इन लोगोंने उससे घृणा की। परन्तु आज वैसी परिस्थिति नहीं है, इस लिए येही उसको धर्म समझने लगे हैं। आज राजनीतिके मैदानमें उतर पड़ना बड़ी वीरता का काम समझा जाता है, जो लोग आज राजनीति के मैदान मे आकर काम करते हैं वे सत्यवादी और पवित्र समझे जाते हैं, पर कालिदास ऐसा नहीं समझते थे। अतएव उन्होंने अपने प्रसिद्ध शाकुन्तल नामके नाटकमें कण्व-शिष्योंके मुँहसे कहवाया है "परातिसन्धानमधीयते ये विद्येति ते सन्तु किलासवाचः" अर्थात् दूसरों को धोखा देने को जो विद्या समझते हैं और विद्या

समझकर जो इसका अध्ययन करते हैं क्या उनकी बातें प्रामाणिक हो सकती हैं ? यह है कालिदास की मोठी चुटकी उन्होंने यह चुटकी अपने समयके राजनीतिज्ञों पर ली है। ये दो उदाहरण इन बातोंको स्पष्ट प्रमाणित करते हैं कि कर्म नियमित नहीं हैं।

बात यह हुई, मनुष्य कर्म करता है किसी फलके लिए। पहले फलकी इच्छा उत्पन्न होती है तब उसी फल को पानेके लिए मनुष्य कर्म करनेके लिए उद्यत होता है। जब उसका कर्म पूरा उतरता है, उसका कर्म फलवान् होता है, उस समय लोग कहते हैं, अमुक मनुष्यको सिद्धि प्राप्त हुई। कर्मों को करके उनसे फल पाना ही सिद्धि है।

अब आप लोगोंको मालूम हो गया होगा कि कर्म और सिद्धि इनमें क्या संबन्ध है। कर्मसे सिद्धि उत्पन्न होती है। अथवा यों समझिये कि सिद्धिकी दो अवस्थाएं होती हैं। पहलीका नाम कर्म है और दूसरीका नाम फल। कर्मसे फल उत्पन्न होने पर ही कर्म की सिद्धि मानी जाती है।

एक मनुष्यने काग़ज़का कारख़ाना खोला। वह चाहता है कि कारख़ानेसे खूब आमदनी हो और इस कारख़ानेका मूल धन भी बढ़ जाय। इस लिए उसने खूब परिश्रम किया और मूल धनके द्वारा दूसरोंसे परिश्रम ख़रीद कर उस कारख़ाने में लगाया। यह अवस्था उस मनुष्य के कर्मकी है। इस कर्म के द्वारा जब उसे अच्छी आमदनी होने लगी, वह एक बहुत बड़ा धनी हो गया और कारख़ानेका मूल-धन भी बढ़ गया। उस समय लोग कहते हैं, अमुक मनुष्य को सिद्धि हुई; क्योंकि वह जो फल चाहता था वह उसे

मिल गया, जिस फलके लिए वह कर्म करता था वह फल उसे मिल गया।

पशु-पक्षियोंकी बात मालूम नहीं, मनुष्योंको अनेक प्रकारकी सिद्धियोंकी अपेक्षा रहती है। कोई चाहता है, धन कमाना, कोई यश चाहता है, कोई विद्वान् बनना चाहता है और कोई संसारसे संबन्ध ही त्याग देना चाहते हैं। ये सब इच्छाएँ हैं और इनका पूर्ण होना सिद्धि है। जिसकी जैसी इच्छा होती है वह अपनी उस सिद्धिके लिये कर्म भी वैसा ही करता है।

यहाँ एक और बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है। वह है सिद्धियों का तारतम्य। यद्यपि सब सिद्धियाँ समान हैं, और सभी के लिए कर्म भी करना पड़ता है; परन्तु इन सिद्धियोंमें कतिपय सिद्धियाँ ऐसी हैं, जो बड़ी समझी जाती हैं, उन सिद्धियोंको पानेवाले बडे आदरकी दृष्टि से देखे जाते हैं और कतिपय सिद्धियाँ ऐसी हैं, जो साधारण समझी जाती हैं। उन सिद्धियोंका स्वाभाविक आदर नहीं होता। ऐसा क्यों होता है? इस बात पर विचार करना आवश्यक है। हम पहले इसका उदाहरण देते हैं, फिर इसके कारण पर विचार करेंगे।

दो मनुष्य हैं। उनमें एक यश चाहता है और दूसरा धन चाहता है। यशके लिए दूसरे प्रकार का कर्म किया जाता है और धन के लिए दूसरे प्रकार का। अपनी अपनी इच्छित सिद्धियोंको पानेके लिए दोनोंने प्रयत्न किया। यश चाहनेवालेने विद्या अर्जन की, अपने मानवीय गुणोंका विकाश किया। दीनोंकी उसने रक्षाकी, अत्याचारियोंके अत्याचारों का दृढ़तापूर्वक सामना किया। सबके अधिकारोंको यथायोग्य पालन किया, दान किया। इसी प्रकारके उसने और

भी अनेक काम किये, जिनसे उसका यश बढ़ा। उसे सिद्धि प्राप्त हुई, लोग उसे यशस्वी समझने लगे। दूसरा जो धन चाहता था। उसने धन पानेके लिए प्रयत्न किया। वह धनी हुआ। इन दोनोंको सिद्धि मिली अवश्य, पर यशस्वीकी सिद्धि जिस दृष्टि से देखी जाती है, जिस तरह उसका आदर होता है वैसा आदर धनीका नही होता। धनीका आदर करनेवाले वेही कुछ लोग होते हैं जिनका उनसे संबन्ध है, जिनका उनसे स्वार्थ है अथवा किसी प्रकारकी आशा पूर्ति होनेकी सम्भावना है। पर यशस्वीका आदर सभी करते हैं। जिनसे उनका संबन्ध है वे अथवा जिनसे उनका संबन्ध नही है वे, दोनों प्रकारके मनुष्य उनका आदर करते हैं। इसका कारण भी सुन लीजिये।

एक व्यक्तिके स्वार्थ से समूहका स्वार्थ सदा बड़ा होता है। इसी तरह जो सिद्धि एक व्यक्तिके स्वार्थकी है समूहके स्वार्थ की सिद्धि उससे कहीं बढ़ कर है। धन चाहने वाले की सिद्धि यद्यपि सिद्धि है, पर वह एक व्यक्तिकी सिद्धि है। उस धनसे वही लाभ उठावेगा जिसका उस पर अधिकार है। उस धनसे दूसरोंको लाभ नहीं होगा और धन उपार्जन करनेके लिए उसे अपने देशबन्धुओंको भी कभी कभी धोखा देना पड़ेगा, असत्य व्यवहार करना पड़ेगा। उस के यहाँ मज़दूरी आदि करके जो लोग कुछ धन उससे पाते हैं, वे भी उससे प्रसन्न नही रहते, क्योंकि धनी अपने धनकी रक्षाके लिए सदा यही चाहता है कि मुझे कम मज़दूरी देनी पड़े और काम अधिक लिया जाय। वह मज़दूरोंसे अधिक काम लेता है और मज़दूरी कम देता है। ऐसी अवस्थामें

दू'' क अप्रसन्न होना कुछ अस्वाभाविक नहीं है। यदि

वे इसी प्रकारके होते हैं। अतएव इन परिणामोंको विचार कर और देखकर धनकी सिद्धिका आदर नही होता।

यश चाहनेवाले का लोग आदर करते हैं, इसका कारण उसकी व्यापकता है। यश चाहनेवालेको सबसे पहले इस बात पर ध्यान देना पडता है कि मैं अच्छे अच्छे काम करूँ। क्योंकि जब तक वह ऐसा नही करेगा तब तक यशस्वी नहीं हो सकेगा। जिस कामको समूह अच्छा समझता है, यश चाहनेवाला मनुष्य उन्ही कामोंको करेगा। जब समूह देखेगा कि यह वही कर रहा है जिसका करना हम लोग अच्छा समझते है, फिर समूह भी उसकी प्रशंसा करने लगेगा, क्योंकि वह समूहके लाभदायक कामोंको कर रहा है। यह तो आप जानते ही हैं, जिस कामसे जिसको लाभ होता है वह उसी कामको अच्छा समझता है और कोई भी समूह किसी बुरे कामको अच्छा समझही नही सकता। इस प्रकार यश चाहनेवालेका काम बहुतोंके लिए लाभदायक है। बहुतों का भला करके ही वह यशस्वी बन सकेगा। अतएव धनी की सिद्धि से यशस्वी की सिद्धि बड़ो है। धनी चाहता है धन, इसके लिए यदि उसे किसी की बुराई भी करनी पड़ी तोभी वह कर सकता है, पर यशस्वी के लिए यह बात नही है। यशके शास्त्रमें किसीकी बुराई करना लिखा हो नही है। यश चाहनेवाला सदा किसीको भी बुराई करनेसे डरा करता है क्योंकि जहाॅ उसने बुराई की नही और उसका यश गया नहीं। यशस्वी अपने समूहके लिए एक बहुत अच्छा आदर्श छोड़ता है। उसकी प्रशंसा देख कर और लोग भी उसी मार्ग-से चलनेके लिए प्रयत्न करते हैं। यदि उन लोगोंमें थोड़े भी अपने प्रयत्नमें सफल हुए तो निश्चित समझना चाहिये कि

समूहका बड़ा उपकार हुआ । ऐसे मनुष्योंकी अधिकतासे समूहमें सद्गुणोंका विस्तार होता है, मानवीय गुणों का विकाश होता है ।

यह बात नहीं है कि यश चाहनेवाला धन न चाहता हो, वह भी धन चाहता है और अर्जन भी करता है, पर उसका धन अच्छे कामोंके लिए होता है, उसके धनसे दरिद्रोंकी सहायता होती है, आपत्तिसे घिरे हुए असहाय व्यक्तियोंका उद्धार होता है। उसकी विद्यासे समाजमें विद्याका प्रकाश फैलता है, मूर्ख विद्वान् बनाये जाते हैं। वह इन सब कामोंको इस लिए करता है कि वह यश चाहता है, यशके लिए ये सब साधन हैं। पर धनीके लिए ये बातें नही है। धनी केवल धन चाहता है। वह धन एकत्रित करेगा, चाहे जिस प्रकार हो।

यही है सिद्धियोंका तारतम्य। एक सिद्धिका जनसमाज में आदर होता है और दूसरी सिद्धिका समाज में आदर नही होता। इसका कारण बतलाया गया । जो सिद्धियाँ बहुतों को लाभदायक हैं उनका आदर होता है और जो प्रधानतः व्यक्तिविशेषके लाभकी इच्छासे प्राप्त की जाती हैं उनका आदर भी उतना अधिक नही होता। यही है साधारणतः सिद्धियों के तारतम्य का कारण।

मनुष्य-जीवन सापेक्ष है अर्थात् मनुष्यको अपने जीवन धारण करनेके लिए दूसरोंकी अपेक्षा रहती है। मनुष्य अपने आसपासकी अनेक वस्तुओंके संयोगसे बनता तथा पालित होता है। उसको अपने उपयोग के लिए अनेक बाहरी पदार्थ लेने पड़ते हैं और इसी प्रकार अपने अनेक तत्त्व बाहरी पदार्थोंको भी देने पड़ते है । यही परस्पर आदान-प्रदान मनुष्य-जीवनके गठित होनेका प्रधान साधन है।

प्रकृतिके राज्यके समस्त पदार्थोंको इसी सापेक्ष नियम पर चलना पड़ता है। पत्थर आदि भी इसी सापेक्ष नियमके अन्तर्गत हैं, उनको भी इसी नियमके अनुसार चलना पड़ता है। पर हम लोग इस बातको नहीं जानते, क्योंकि हमारा उधर ध्यान नहीं है। जिन लोगोंने ध्यान दिया है, वे इस बातको जानते हैं। पत्रों द्वारा प्रमाणित करते हैं और अवसर आने पर लोगोंको प्रत्यक्ष दिखा भी देते हैं। कहनेका तात्पर्य यह है कि प्राकृतिक सृष्टि इसी सापेक्ष नियमके आधार पर चल रही है। एक पदार्थ दूसरे पदार्थसे सहायता लेता है और दूसरे पदार्थ तीसरे पदार्थसे।

मानव जीवन सापेक्ष है, यह स्वयं पूर्ण नहीं है। इसको अपने उपयोगके लिए वाहरी पदार्थोंसे सहायता लेनी पड़ती है। इस बातका प्रमाण बाल्यावस्थासे ही मिलने लगता है। जिस समय मातृगर्भसे एक छोटा सा पुतला उत्पन्न होता है उसी समयसे वह अपनी चेष्टाओंसे, प्रयत्नोंसे इस बातका प्रमाण देने लगता है। वह बाहरकी ओर देखता है। रूप, रस, गन्ध आदि गुणोंको पाकर उसकी शक्तियाँ विकसित होने लगती हैं। वह चाहता है इन पदार्थोंको अपने उपयोगमें लाना, इस लिए वह बल लगाता है, प्रयत्न करता है। प्रयत्न करने पर भी जब उसे अपने इच्छित पदार्थकी प्राप्ति नहीं होती, उस समय उसे अपनी शक्तिकी अपूर्णताका ज्ञान होता है। अपनी निर्बल और अपूर्ण शक्ति को बलवती तथा पूर्ण बनानेके लिए अपने मातापिता आदि किसी भी आत्मीय स्वजनकी ओर बड़ी कातर-दृष्टिसे वह देखता है। उस कातर-दृष्टिमें अपनी शक्तिकी अपूर्णता पर दुःख भरा रहता है और सहायताकी प्रार्थना रहती है। यह बात जो एक छः महीने

के बालकमें हम लोग देखते हैं वही बात जवान और प्रौढों में भी देखी जाती है। पर दोनोंके रूपमें कुछ अन्तर अवश्य होता है। बालकोंकी सहायता-प्रार्थना निःशब्द और सरल होती है और जवान सहायताकी प्रार्थना शब्दों से करते हैं, इसमें कहीं कहीं प्रलोभनोंका आडम्बर भी रहता है, कहीं धमकी और कहीं अपने किये हुए बनावटी या सच्चे उपकार का स्मरण। बात एक ही है, पर ढाँचा भिन्न भिन्न हैं।

ज्यों ज्यों मनुष्यकी आयु बढ़ती है, ज्यों ज्यों उसका ज्ञान बढ़ता है, त्यों त्यों उसका संबन्ध भी बढ़ता जाता है। ज्यों ज्यों मनुष्य बड़ा बनता जाता है, त्यों त्यों उसकी सापेक्षता बढ़ती जाती है। वह कुटुम्बमें प्रवेश करता है। माता, पिता, भाई, बहिन, कुल, परिवार, नौकर, चाकर, स्वामी, गुरु, समाज आदिके प्रति उसका कर्तव्य जागृत होता है। उसे इनके प्रति कुछ करना पड़ता है। इसी प्रकार देश, देशवासी समाज आदिके प्रति कर्तव्य पालन करनेका भी समय उपस्थित होता है।

इस सापेक्षताको बनाये रखना अपने कल्याणके लिए आवश्यक है। इस सापेक्षताको दृढ़ रखनेके लिए प्रार्थनाकी आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है उन्हीं सिद्धियोंकी, जिनका वर्णन पहले किया गया है। आवश्यकता है कर्म करने की।

अब सिद्धियोंके तारतम्यका असली कारण भी समझमें आ जाना सहज है। सापेक्षताको दृढ़ रखना अपने कर्तव्यों का पालन करना आदिका ध्यान रख कर जिस सिद्धिके पानेके लिए प्रयत्न किया जाता है वह सिद्धि महती सिद्धि है। जिस सिद्धि में इन बातोंका ध्यान नहीं रखा जाता वह

सिद्धि सिद्धि अवश्य है, पर उसका आदर नहीं होता। वह सिद्धि पहली सिद्धिकी अपेक्षा न्यून समझी जाती है; क्योंकि उसने सापेक्षता—मनुष्योंके फैले हुए संबन्धोंको दृढ़ करने में सहायता—नहीं की।

यश चाहनेवालेका कर्तव्य इस संबन्धको, इस सापेक्षता को, दृढ़ करता है, इस लिए वह विशेष आदरणीय है और धन चाहनेवालेके कर्म इस संबन्धको उतना दृढ़ नहीं करते, इस कारण धन चाहनेवाला विशेष आदरणीय नहीं समझा जाता। यश चाहनेवालेके कामोंसे समूहके स्वार्थकी सिद्धि होती है और धन चाहनेवाला अपना स्वार्थ सिद्ध करता है। यही दोनोंमें भेद है, इसी भेदके कारण इनके आदर और उपेक्षा की भी व्यवस्था होती है।

सिद्धि पाने की योग्यता

इन सिद्धियोंको प्राप्त करनेके लिए योग्यताकी अपेक्षा होती है। यह बात तो अब सिद्ध हो गयी कि हमारा सामाजिक, पारिवारिक आदि संबन्धका स्थिर रहना तथा इनकी स्थिरता द्वारा अपना कल्याण होना इन्हीं सिद्धियों पर निर्भर है। अतएव इस बातकी ज़रूरत है कि इनके पानेकी योग्यता प्राप्त की जाय। प्रत्येक मनुष्यके लिए यह आवश्यक है कि वह अपनेको इस योग्य बनावे, वह अपनी शक्तियोंको इस प्रकार विकसित करे और विकसित होने दे, जिससे उसके लिए सिद्धि पानेका मार्ग सरल और सीधा हो।

इन सिद्धियोंको प्राप्त करनेकी योग्यता सावधानीसे प्राप्त करनी चाहिए। यह योग्यता अपनी शक्तियोंको विकसित करनेसे, अपने ऊपर भरोसा करनेसे, मिलती है इस विषयमें आजकल हम लोगोंकी धारणा बिलकुल विपरीत हो गयी है। कुछ लोग मनुष्योंकी अज्ञताका ही ढिँढोरा पीटते हैं, वे मनुष्यकी शक्तिके द्वारा किसी भी कार्यका सिद्ध होना अच्छा नहीं समझते। भरपूर ज़ोर लगाकर बड़ी गम्भीरताके साथ युक्तियाँ सोचकर उस दलवाले मनुष्योंको अयोग्य ठहराते हैं। वे कहते हैं—

"भाग्यवन्तं प्रसूयेथा मा शूरान् मा च पण्डितान्।
शूराश्च कृतविद्याश्च वने सीदन्ति पाण्डवाः॥"

भाग्यवान् पुत्र उत्पन्न करो, शूर और पण्डित नहीं। पाण्डव शूर भी हैं और विद्वान् भी हैं पर भाग्यवान् नहीं हैं, इस कारण वे वन में भटक रहे हैं। भाग्यवादी किसी भी काम की सिद्धि तथा असिद्धिमें भाग्य और अभाग्य को लाकर जोड़ते हैं। कोई राजा है, कोई धनी है, कोई विद्वान् है, यह

सब क्या है, सभी भाग्य के खेल हैं। एक आदमी कहीं जा रहा था, अकस्मात् उसकी दृष्टि एक स्त्रीपर पड़ी, वह पीड़ित थी, कई दिनोंसे भोजन न मिलनेके कारण वह निर्बल हो गई थी, मार्ग चलना उसके लिए कठिन हो गया था। वह मार्गमें बेहोश होकर गिर पड़ी थी। वह आदमी उसके पास गया, उठाकर उसे अपने घर ले गया, सेवा शुश्रूषा करने पर वह स्वस्थ हुई। स्वस्थ होनेपर वह अपने प्राण-रक्षकसे बोली, मेरे पास पिताकी सम्पत्ति है, उस पर दूसरोंने अधिकार कर लिया, पिताने उस सम्पत्तिका विल मेरे नाम कर दिया है। आप मेरी इतनी और सहायता कीजिये कि किसी वकीलसे काग़ज़पत्र दिखलाकर इसकी जैसी व्यवस्था हो वह कीजिये। स्त्रीको यह बात मालूम नहीं थी कि वह एक वकीलसे ही बात कर रही है। अस्तु मुकद्दमेसे उस स्त्री को अपनी जायदाद मिल गयी। तद्नन्तर मरनेके समय वह अपनी समस्त जायदाद उन्हीं वकील साहबके नाम कर गयी। यह भाग्य नहीं तो क्या है, दूसरे वकील भी तो बहुत थे। वे उसको अपने यहाँ क्यों नहीं ले गये? उन लोगोंने उसकी सेवा-शुश्रूषा क्यों नहीं की? शङ्कराचार्यके प्राण लेनेके लिए कापालिक तलवार उठाये खड़ा था, उनके सिरके उतरनेका समय आगया था। विलम्ब केवल यही था कि तलवार आवे और उनका सिर धड़से अलग हो जाय। उसी समय उनके शिष्य पद्मपादाचार्य उपस्थित हुए और उन्होंने उसे मार कर भगा दिया। यह है भाग्यकी महिमा।

इस प्रकार सर्वतोभावेन भाग्यको महत्त्व देकर उस दलके प्राणी सिद्धियोंको प्राप्त करनेके लिए किसी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं समझते, योग्यता प्राप्त करनेका नाम भी नहीं लेते।

दूसरा दल इस बातको नही मानता। वह दल भाग्यके भरोसे जीवन बिताना पशुता समझता है। ऐसे जीवनकी उपमा वह पशु-जीवनसे देता है। वह कहता है, बुद्धिपूर्वक काम करो। समझ बूझकर काममे लग जाओ। सिद्धि अवश्य मिलेगी। सामनेका रखा हुआभी भोजन विना कर्मके, विना परिश्रमके, प्राप्त नही होता। समझ बूझकर देश काल का विचार कर और उत्साहपूर्वक कार्य प्रारम्भ करो, कार्यकी सिद्धि अवश्य होगी। यद्यपि कभी कभी अच्छे ढंग से प्रारम्भ किये हुए कार्योंमें भी सिद्धि नही मिलती, व्यापार करनेवालेको कभी कभी हताश भी होना पड़ता है, पर इसका अर्थ यह नही है कि उसका भाग्य अनुकूल नही, भाग्य की प्रतिकूलताने ही उसके समस्त व्यापारोंको चौपट कर दिया। इस प्रश्नकी अच्छी मीमांसा एक संस्कृतके कविने की है। वह कहता है—

"यत्ने कृते यदि न सिध्यति, कोऽत्र दोषः?"

यत्न करने परभी यदि सिद्धि प्राप्त न हो, उस समय विचारो कि हमारे यत्नमें सिद्धिके लिए किये हुए हमारे कार्यमें दोष क्या है। उस कविका सिद्धान्त यह मालूम होता है कि अच्छे ढंगसे कार्योंके करने पर सिद्धि अवश्य प्राप्त होती है। अतएव सिद्धि न होने पर अपने कार्योंको फिरसे सुधारनेके लिए, उनके दोषोंको दूर करनेके लिए वह उपदेश देता है।

कार्यकारणका संबन्ध दृढ़ है। विना कारण कार्य उत्पन्न नहीं होता। सभी पदार्थोंका कुछ न कुछ कारण होता ही है। यह बात दूसरी है कि कुछ कारणोंसे कार्योंकी सिद्धि शीघ्र

ही होती है और कुछ कारण विलम्बसे कार्यको सिद्ध करते हैं। पर कार्योंके लिए कारणका होना आवश्यक है। सम्भव है हमारे कोई प्रयत्न आज ही फल दे दें और कतिपय प्रयत्नोंका फल कालान्तरमें हो, देरसे हो। पर ऐसा कोई भी कार्य नहीं है, ऐसी कोई भी घटना नहीं है, जो निष्कारण हो, जिसके लिये कभी प्रयत्न न किया गया हो और वह सिद्ध हो जाय। जिन कार्योंके कारण दीख पड़ते हैं उनको लोग व्यापारसे सिद्ध हुआ मानते हैं और जिन कार्योंका कारण कार्यसे दूर रहता है अथवा उसके विषयमें ज्ञान प्राप्त करनेके लिए बहुत ही कठिन मार्ग रहता है। साधारण लोग उस कार्यको भाग्यके द्वारा हुए बतलाते हैं। वे उन कार्योंके कारण क्या हैं, इस बातको सोचनेके लिए इस बातका निश्चय करने के लिए कष्ट उठाना स्वीकार नहीं करते, अतएव वे इस बीचमें भाग्यको लाकर पटक देते हैं।

उत्साही, परिश्रमी, कर्मियोंके सामने भाग्यका पहाड़ खडा करना अत्यन्त अनुचित है, ऐसा करना उनकी शत्रुता करना है। उगती हुई कार्यशक्तिको दवाना है और समाजके प्रति घोर विरुद्धाचरण करना है। अपने अधिकारकी वातोंका ही तो हमको विचार करना चाहिए, जो हमको करना है वही तो करना चाहिए। भाग्यके विषयमें किसीको कुछ भी नहीं करना पड़ता, किसीके बनाये भाग्य नही बनता, वह अदृश्य मैदानमें दिव्य कल पुर्जोंके द्वारा बनी मेशीनमें तैयार होता है। फिर ऐसे पदार्थके विषयमें तुमको चिन्ता करनेकी क्या आवश्यकता है। शहरके अन्देशेसे क़ाज़ीका दुबला होना क्या शोभा देता है। तुम अपना कार्य प्रारम्भ करो, उस के पहले खूब समझ बूझ लो, देशकालका विचार कर लो।

अपनी शक्तिको चेतन कर दो। लग जाओ फिर काम में। भाग्यकी ओर भूल कर भी मत देखो। यदि तुम कट्टर भाग्यवादी हो, तोभी कोई आवश्यकता नहीं उसकी ओर देखने की, क्योंकि उसके विषय में तुमको कुछ भी करना नहीं है। यह पक्का पकाया मामला है, जो करना है उसे करते जाओ। यदि तुम्हारा भाग्य अच्छा है, मालामाल हो जाओगे यदि वह खोटा, बहुत ही खोटा है, तोभी कर्मकी शान पर चढ़ कर कुछ सुधर ही जायगा।

कथा सुनी जाती है बडे बड़े वीरोंकी, विद्वानोंकी, धनियों की, राजाओं की। भाग्यवादी कह देते हैं कि वे भाग्यवान् थे। पर जिन लोगोंने उनका जीवन-चरित पढ़ा है, वे जानते हैं कि वे कितने कर्मी थे, वे भाग्यके भरोसे बैठ कर लम्बी लम्बी बातें बनानेवालोंमेंसे नहीं थे और बैठे बैठे अपने समाजमें आलस्य तथा अकर्मण्यता का प्रचार नहीं करते थे। वे थे पक्के और मज़बूत कर्मी, उन लोगोंने मानवी शक्तियोंको विकसित करनेके लिए, अपने गुणोंको प्रकाशित करके अपना प्राप्य अधिकार पानेके लिए कितना परिश्रम किया था, यह बात उन विद्वान् महात्माओंके जीवनचरित्र पढ़नेवालों से छिपी नही है।

मनुष्यकी शक्तियाँ अपरिमित और असीम है, बड़े बड़े कार्य मानवी शक्तियोंके द्वारा हुए हैं, समुद्र को बाँधना, आकाश में उड़ना आदि मानवी शक्तिके विकाशके प्रमाण हैं। पर वह विकाश भाग्यके भरोसे रहनेसे नही होता है। उसके लिए संसारकी कर्म-पाठशालामें अध्ययन करना पड़ना है। फिर सिद्धि होती है। महादेव गोविन्द रानडेको कौन नही जानता। उनकी शक्तियाँ विकसित हुईं, उनके प्रयत्नों से, वे देशके नेता बने, और राजाके विश्वासपात्र न्यायाधीश।

राजा और प्रजा दोनोंने उनसे लाभ उठाया, क्या भाग्यवादी इस प्रकारकी सिद्धिका उदाहरण दे सकते हैं? भाग्यसे मिलता है केवल धन, और कोई भी चीज़ नहीं मिलनी। जो भाग्य धन देने के लिये उदार है, वही दूसरे प्रकारकी सिद्धियों का प्रश्न छिड़ने पर मुट्ठी बाँध लेता है, इसका कुछ कारण मालूम नहीं होता। इसका विचार पाठक करें। विद्वान् होने के लिए तो पढ़ने का परिश्रम उठाना पड़ता है, विद्या भाग्य से नहीं मिलती। इसी प्रकार और सिद्धियाँ भी भाग्यसे नहीं मिलतीं। क्यों, मालूम नहीं। भाग्य के पक्षपाती धनप्राप्ति के ही उदाहरण दिया करते हैं। रानडेने परिश्रम किया, ढंग से काम किया, उसका जो फल होना चाहिए वह हुआ।

जो लोग अपने कार्योंमें असफल होते हैं, उनमें बहुत लोग अभाग्यके नाम पछताया करते हैं। पर भूल कर भी अपनी ओर नहीं देखते। अपने आचरण कैसे हैं अपने व्यवहार कैसे हैं और अपनी कार्यपद्धति कैसी है इन बातों पर विचार करना उनके मतसे अनावश्यक है। मैंने ऐसा कहते किसीको भी नहीं सुना है कि मेरे दोषसे यह काम बिगड़ गया। उन को बहुत अभिमान है, और वे अपनेको बड़ा विद्वान् भी समझते हैं, अतएव दूसरोंको उलटा पलटा समझाया करते हैं। इस प्रकार वे अपनेको निर्दोष और शक्तिशाली साबित करना चाहते हैं। परन्तु लोग मूर्ख नहीं हैं, वे उनकी बातों का ठीक ठीक अर्थ समझ लेते हैं। कुछ लोग इस प्रकारके होते हैं, कुछ लोग अभाग्य को ही कोसा करते हैं। पर विचारवान् जब उनकी ओर देखते हैं उस समय वे उनमें अनेक त्रुटियाँ पाते हैं, जो उनकी असिद्धि की मूल होती हैं। उनकी कार्यपद्धति निर्दोष नहीं होती। वे खूब सोच समझकर अपना

कार्य प्रारम्भ नही करते। उनमें सबसे बड़ा दोष होता है आलस। आलसके पञ्जों में फँस जानेसे उनके लिये हाथ पैरों का हिलाना भी कठिन हो जाता है। चुपचाप बैठे रहते हैं, बहुत हुआ तो किसीकी खुशामद की और उसके द्वारा कार्य सिद्ध करवाना चाहा। पर ये ढंग कार्य सिद्ध होनेके थोड़े ही हैं। ऐसे लोगोंको भो सावधान हो जाना चाहिये, और अभाग्यको दोष देना निष्फल जानकर ढगसे काम शुरू कर देना चाहिये। आलस्य, मूर्खता आदि दोषोंसे किसी का कार्य सिद्ध नहीं होता। पर लोग इसका कारण अभाग्य बतलाते हैं। बतलावें, पर कार्य सिद्ध न होनेसे जो हानि हुई, उसकी पूर्ति कैसे होगी। क्या अभाग्यका नाम जपनेसे। नही, उसकी पूर्तिका केवल एकही उपाय है और वह है अपनी कमज़ोरियोंको दूर करना, कार्य सिद्ध होनेके उपयुक्त सामग्रियोंका संग्रह करना और अपनो कार्यपद्धतिको सुधारना।

कहीं कहीं आकस्मिक रूपसे कार्य होते देखे गये हैं। अचानक कुछका कुछ हो जानेके अनेक उदाहरण सुने जाते है। पर इसका कारण भाग्य नहो, किन्तु परिस्थिति का प्रबल धक्का। सौ आँच में तैयार होनेवाला वैद्य का रस एक आँच में भी तैयार हो जाता है जब कि वह एकही आँच सौ आँचोंके बराबर हो। ऐसा होना असम्भव नहीं है किन्तु साधारण है। ऐसा होता है। कार्यक्षेत्रकी सुविधा होने पर अधिक दिनों में सिद्ध होने वाला कार्य प्रबल शक्तियोंके द्वारा इतना शीघ्र सिद्ध होता है कि उसके विषयमें यह मालूम करना कठिन हो जाता है कि यह कब प्रारम्भ हुआ था और कब सिद्ध हुआ। कभी कभी ऐसा भी होता है कि कोई कार्य बहुत दूर तक आगे बढ़ाया जा चुका है, उसको अभी सिद्धि नहीं हुई।

परिस्थितिकी अनुकूलताके कारण कभी कभी वह कार्य स्वयं सिद्ध हो जाता है । उस कार्यकी सिद्धिके लिए जो कुछ थोड़े बहुत श्रमकी आवश्यकता होती है, वह परिस्थितिकी अनुकूलताके द्वारा स्वयं प्राप्त हो जाता है । यही कार्य आकस्मिक समझा जाता है । वास्तविक कोई भी कार्य आकस्मिक नहीं होता ।

कुछ लोग देवी देवताओंकी कृपासे, सिद्ध महात्माओंके आशीर्वादसे कार्योंका सिद्ध होना निश्चित समझते हैं । इस विषयमें हम कुछ विशेष नहीं लिख सकते । कारण, इस सिद्धान्तवाले बड़े चतुर हैं, वे दैवी शक्तियों का गुण-गान करते हैं । उनके द्वारा असम्भवको भी सम्भव कर दिखाने की प्रतिज्ञा करते हैं । पर हम आजकल इस नाम पर धूर्तता का प्रसार होते देखते हैं । इस प्रकार कितने ही मुकद्में हुए हैं जो इसी दैवीशक्तिके भरोसे कार्यकी सिद्धि माननेवालों ने पीछेसे हताश होकर चलाया है । सम्भव है, कुछ महात्मा ऐसे हों जिनके उपदेशोंसे मनुष्यका कल्याण हो, कार्य-सिद्धिका कोई ढंग निकल आवे । पर वे हैं बहुत ही कम । उनसे सब लोग लाभ उठा नहीं सकते, फिर ये सच्चे महात्मा हैं, इसीका निश्चय कैसे होगा ? अतएव इन बातोंके झमेलेमें न फँसकर इसी प्रकार कार्य प्रारम्भ करना चाहिये जो अपनी शक्तियों पर अवलम्बित है । मेरी समझसे यह देवताओं की कम कृपा नहीं है कि हम लोगोंका स्वास्थ्य अच्छा है, बल है, बुद्धि है, कार्य करनेके लिये मैदान भी है, फिर देवताओं को अपने कार्योंके लिए भी कष्ट देना, जिन्हें हमलोग स्वयं सिद्ध कर सकते हैं, अच्छा नहीं और उचित भी नहीं है । सिद्ध ~ त्मा दयालु होते हैं । उनका स्वभाव ही है सबके कल्याण

करनेका । उनकी तपस्या आदि जो कुछ हैं, वे सभी संसार-के कल्याणही के लिए होते हैं । उनके पीछे लगनेकी आवश्यकता नहीं है । उनको तंगकर उनके कार्योंमें विघ्न डालनेसे लाभ नहीं, हानि ही होती है ।

सिद्धिके मार्गमें काँटे होते हैं, जिनमें कतिपयका उल्लेख किया गया । सिद्धिके मार्गका सबसे बडा काँटा है कार्य-पद्धतिका न जानना । परिश्रमसे होनेवाले कार्योंको भाग्य या देवी देवताकी कृपा अथवा सिद्ध महात्मा के आशीर्वाद से सिद्धि समझना सिद्धिके मार्ग का कॉटा है । संसारमें कई प्रकारकी सिद्धियाँ होती हैं, उनके लिए भिन्न प्रकारके प्रयत्न भी करने पड़ते हैं । फिर आप सब कार्योंकी सिद्धि—अपने बलसे सिद्ध होनेवाले कार्योंकी भी सिद्धि—देवप्रसाद मानें, भाग्यका उपहार समझें और सिद्धजीकी कृपाका गुण गावें । इसका अर्थ क्या है ? इन सबों पर यदि आपका अधिक विश्वास है तो उसे बनाये रखिये, अपनेको भी किसी काममें लगाइये, आप परिश्रम करनेसे डरते क्यों हैं, क्या जिस परिश्रमसे आप-कष्टके कारण बचना चाहते हैं, उन्ही कष्टमय कार्यों में अपने मान्य देवता और महात्माओंको जोत देना उचित समझते हैं ? क्या उनको कष्ट नही होगा ? यदि आप समझते हैं उनकी शक्तियाँ महान् हैं, और इसी कारण आपके समान सैकड़ों मनुष्य उनके अनुगत बने हैं । यदि आपका ऐसा विश्वास है तो फिर आप भी अपनी शक्तियोंको महान् बनाने का प्रयत्न क्यों नही करते । इसका उत्तर यदि आप हाँ में देते हैं तब तो ठीक है । नही तो दूसरे उत्तर आपके आलसी स्वभावके द्योतक समझे जायँगे ।

कहा गया है कि सिद्धियाँ मनुष्यको सुखी बनाती हैं, उस के फैले हुए संबन्धों को दृढ़ करती हैं। इसके लिए बहुतसे नये पदार्थ अर्जन करने पड़ते हैं, और बहुतसे अर्जित पदार्थोंकी रक्षा करनी पड़ती है। इस अप्राप्त का पाना और प्राप्तकी रक्षाका नाम योगक्षेम है। योगक्षेमके लिए ही सिद्धियों का पाना आवश्यक है । सिद्ध मनुष्य शक्तिमान् होता है, संसारके कार्योंके लिए उपयुक्त बनना ही सिद्धि है। हम आगे सिद्धिके सहायक गुणोंका उल्लेख करेंगे।

सिद्धि-निर्वाचन ।

सिद्धि चाहनेवालोंके लिए यह बात सबसे आवश्यक है कि वे पहले सिद्धिका निर्वाचन कर लिया करें । उन्हें किस प्रकारकी सिद्धि की आवश्यकता है । इस बातके ज्ञानके बिना सिद्धिका प्राप्त होना कठिन है। सिद्धियाँ अनेक हैं। उनके लिए प्रयत्न भी भिन्न भिन्न प्रकारके करने पड़ते हैं। कोई कारख़ाना खोलकर बड़ा धनी बनना चाहता है कोई विद्यामें पारदर्शिता प्राप्त करना चाहता है, कोई वीर बनना चाहता है, कोई चाहता है शानशौक़ से रहना, कोई चाहता है साधारण रीति पर जीवन बिताना और कोई चाहता है लोगों पर हुकूमत करना ।

सापेक्षताको, सामाजिक सम्बन्धको, मानवीय गुणको दृढ़ रखनेके लिए इन सिद्धियोंका प्राप्त करना आवश्यक है और इसी कारण सिद्धियोंके लिए प्रयत्न किया जाता है। प्रत्येक मनुष्य अपने लिए सिद्धि चाहता है। परन्तु इस विषय में बड़ी ग़लतियाँ की जाती हैं । लोग इस बातका निश्चय नहीं करते कि हमको कौनसी सिद्धि चाहिये और लग जाते हैं सिद्धियोंको प्राप्त करनेके लिए प्रयत्न करने में। कहाँ जाना है इसका बिना निश्चय किये यदि कोई चलता जाय तो इसका फल क्या होगा। सम्भव है कहीं अच्छे स्थान में चला जाय, सम्भव है वह भयानक समुद्रके तट पर चला जाय और यह भी सम्भव है कहीं जाकर वह खड्डे में गिर जाय। अतएव उसको पहलेहीसे इस बातका निश्चय कर लेना चाहिये कि मुझे अमुक स्थानपर जाना है। इस प्रकारके निश्चयसे आधा काम सिद्ध हो जाता है। आपने निश्चित कर लिया कि मुझे

नरसिंहगढ़ जाना है। इसीके साथ आप यह भी निश्चय अवश्यही कर लेंगे कि नरसिंहगढ़के लिए अमुक मार्ग है। केवल इतना जान लेनेसे ही आधा काम सिद्ध हो जाता है। क्योंकि अब कार्यक्रम निश्चित हो गया। उस मार्ग पर चलने वाला नरसिंहगढ़ अवश्यही पहुँच जायगा इस में सन्देह नहीं, क्योंकि वह मार्ग वहीं के लिए है।

क्या चाहिए इस बातके जान लेने पर कार्यकी सिद्धि बहुत कुछ सहज हो जाती है। मान लीजिए किसीको कुछ रोग है। वह इतना जानता है कि इस रोगके लिए कोई दवा चाहिए, पर क्या दवा चाहिए यह बात उसको मालूम नही। बतलाइये उसके सामने कितनी बड़ी कठिनाई है। वह जाता है दवाकी दुकान पर, दवा माँगता है, जब दवा देनेवाला पूछता है, क्या दवा चाहिये उस समय वह चुप हो जाता है। यदि किसीकी ऐसी स्थिति हो तो क्या उसके मनोरथ पूर्ण हो सकते हैं? क्या उसके द्वारा कुछ भी काम हो सकेगा ? यही बात सांसारिक सिद्धियोँके विषयमें भी समझनी चाहिये। संसारमे जिस समय मनुष्यने प्रवेश किया, साथही उसका संबन्ध भी फैल गया। अब उसे सिद्धियोंकी आवश्यकताका अनुभव होने लगा। यदि वह सिद्धियाँ नहीं प्राप्त करता, तो उसके फैले हुए संबन्ध कमज़ोर होते हैं, उनके छिन्न भिन्न होनेका भय उत्पन्न हो जाता है। इस कारण वह सिद्धियों की ओर आगे बढ़ता है। इस अवस्थामें यदि उसको यह बात मालूम है कि मुझे इस प्रकारकी सिद्धि की आवश्यकता है तब तो ठीक है, अन्यथा उसकी दशा ठीक उसी रोगीके समान होगी। वह काम करेगा, परिश्रम करेगा, सब करेगा पर उसकी इष्टसिद्धि मुश्किलसे होगी। क्योंकि उसे किस प्रकारकी

सिद्धि चाहिये, इस बातका पता नहीं है, वह अपनी सिद्धिको पहचानता नहीं, उसको यह मालूम नहीं कि वह जो काम कर रहा है, उससे कौनसी सिद्धि मिलेगी।

इसी कारण सिद्धिका निर्वाचन आवश्यक समझा जाता है। आप विद्या-संबन्धिनी सिद्धि चाहते हैं तो उसके लिए जो मार्ग नियत है वह कीजिए। आप मशहूर सेठ बनना चाहते हैं तो उसके मार्ग पर आरूढ़ हो जाइये। इसी प्रकार जो जिस प्रकारकी सिद्धि चाहे उसे अपनी सिद्धिका निश्चय पहलेहीसे कर लेना चाहिए।

सिद्धि-निर्वाचन न कर लेने से जो असुविधा होती है, कर्ममय जीवनमें जो कष्ट होता है उसका ठिकाना नहा है। एक विद्वान् के लिए जिन बातों की ज़रूरत है, उसमें जिन गुणोंका होना आवश्यक है. वे गुण धनी बननेमे सहायक नहीं, राजनीतिनिपुण होने के लिए जो परिश्रम करने पड़ते हैं, उस प्रकारके परिश्रम धनी बनने या विद्वान् बनने के लिए आवश्यक नहीं हैं। शारीरिक बल पानेके लिए जिस पाठशाला मे जाना होता है, मानसिक बलकी शिक्षाके लिए उस पाठशालाकी आवश्यकता नहीं है। इनके लिये भिन्न भिन्न पाठशालाएँ हैं। यदि कोई शारीरिक बल-प्राप्तिकी इच्छासे मानसिक बलकी पाठशालामें जाय और पीछे हताश होकर लौटे तो इसमें दोष किसका है? इस कारण बहुत सावधानी से खूब सोच विचारकर अपने लिए सिद्धि नियत करनी चाहिए, तदनन्तर उसके योग्य बनना चाहिए, उस सिद्धिके लिए जिस प्रकारकी शिक्षाकी आवश्यकता है उस प्रकारकी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। शिक्षा आदिके द्वारा योग्य होकर

यदि सिद्धिके लिए प्रयत्न किया जाय तो उसके न प्राप्त होने का कोई भी प्रबल कारण नहीं है।

जो समाज या देश इस बातकी उपेक्षा करता है उसको बड़ा कष्ट होता है। वह समाज अपने व्यक्तियों को कभी सुखी नही कर सकता, फिर वह भी सुखी कैसे हो सकता है? व्यक्तियोंका समूह ही तो समाज है। अतएव समाज को चाहिये कि वह अपने व्यक्तियोंको इस प्रकारकी शिक्षा दे, जो उनकी निश्चित सिद्धियों को पानेके अनुकूल हो। यदि वह ऐसा नहीं करता तो अपनी भूलका फलभी उसे ही भोगना पड़ेगा। कोई समाज अपने व्यक्तियोंको शिक्षा देता है पर वह शिक्षा इस योग्य नहीं कि जिससे उनको इच्छित सिद्धियों को पाने में सहायता हो। इससे समाजमें शिक्षितोंकी संख्या बढ़ेगी। पर समाज की कठिनाइयाँ दूर न होंगी, समाज सुखी न हो सकेगा। वह समाज शिक्षित-मूर्ख समझा जायगा, उसकी योग्यता केवल कहनेके लिए होगी, उससे किसीको लाभ न होगा। समाजमें नये गुणोंका विकाश होना तो दूर रहा, पुराने गुणोंकी स्थिति भी कठिन हो जायगी। क्यों, इसलिए कि उपयुक्त शिक्षा के अभाव से उपयुक्त और इच्छित सिद्धि का पाना कठिन हो जायगा, सिद्धियों के अभाव में सामाजिक संबन्ध का दबाव भीषण रूप धारण करेगा। समाज उस मनुष्यसे आशा किये हुए है, समाज उससे कुछ चाहता है, पर वह व्यक्ति समाज को क्या दे और कहाँ से, उसमें शक्ति नही, योग्यता नहीं; जिनसे सिद्धि प्राप्त कर सके। पर समाज उसे शिक्षित समझता है, वह उसे शक्तियोंका भण्डार और योग्यताका आकार समझता है। इसी लिए वह चाहता है। इस नासमझीसे समाज और व्यक्तिमें अनबनका होना स्वाभाविक है। यह है

पहलेसे सिद्धि निश्चित न करनेका और उसके उपयुक्त शिक्षा न देनेका फल।

जिस समाजने इस उपयोगी और आवश्यक बातकी ओर ध्यान न दिया अथवा उसने इसे उपेक्षा की दृष्टिसे देखा, उस समाज पर सिद्धियाँ अप्रसन्न हो जाती हैं, उसे सिद्धियाँ तो मिलती ही नही और सिद्धियोंके न मिलनेसे दिनों दिन वह छीजता जाता है। उसके मानवीय गुण नष्ट होते जाते हैं। उसकी अन्तिम अवस्था शोकमय और शत्रुको प्रसन्न करने वाली होती है।

साधारणतः हम सिद्धियों को दो भागों में बाँट सकते हैं। एकका नाम प्रत्यक्षसिद्धि और दूसरी का नाम परोक्षसिद्धि है। शिल्प-संबन्धी सिद्धियोंको प्रत्यक्षसिद्धि और विद्या तथा इस श्रेणिकी सिद्धियोंको परोक्षसिद्धि कहते हैं। समाजके लिए इन दोनों सिद्धियोंकी आवश्यकता है और बहुत बड़ी आवश्यकता है। प्रत्यक्षसिद्धिसे समाजका शरीर पुष्ट होता है तो परोक्षसिद्धिसे उसका हृदय और प्राण। अतएव समाज इन दोनों प्रकारकी सिद्धियोंको प्राप्त करनेके लिए अपने व्यक्तियोंको नियुक्त करता है। इस काममें नियुक्त करने के पहले समाज यह भी विचार कर लेता है कि कौन व्यक्ति किस प्रकारकी सिद्धिके लिए उपयुक्त है। इस बातका निर्णय करने के लिए समाजकी ओरसे कोई विभाग नियत नही किया जाता, किन्तु इसके लिए समाज अपनी शिक्षा अपने हाथमें रखता है, उसका द्वार सबके लिए खोल देता है। उत्साही युवक उस मैदानमें आते हैं और अपनी योग्यता प्रमाणित करते हैं। समाज उनको सहारा देता है। उन्हें सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। वे अमर हो जाते हैं।

कल्पना करो, एक समाज है। उसने अपनी आवश्यकताका निर्णय नही किया। उसको क्या चाहिये उसके पास किस वात की कमी है। इसका ज्ञान उसने प्राप्त नही किया। अव उस समाजके व्यक्तियोंकी ओर देखो। उस समाजमें व्यक्तियोंकी कमी नही है पर उपयोगी व्यक्तियोंका अभाव सदा वना रहता है। आदमी वहुत हैं, और काम भी वहुत है पर काम के योग्य आदमी देखनेको भी नही मिलते। वह समाज जिस स्थान पर रहता है वहाँका दृश्य यदि आप जाकर देखें तो आपको दीख पड़ेगा कि सिद्धि-निर्वाचन न करने का क्या कुफल होता है।

गलियोंमें आप जाकर देखेंगे कि मनुष्योंका समूह नौकरी की आशामें इधर उधर घूम रहा है। कारख़ानेके मनेजरों, आफिसोंके मालिकोंके पास वड़ी नम्रतासे उनके मुँहकी ओर देखता है। उनके आँख उठाकर देखनेका भिक्षुक वना है। इस प्रकार एक आफ़िससे दूसरे आफ़िसमें, एक कारखानेसे दूसरे कारख़ानेमें घूमकर सन्ध्याके समय कोई आशासे कोई निराशासे सुख दुःखका अनुभव करता हुआ अपने ठहरनेके लिए स्थान ढूंढ़ने लगता है। उन्होंने कौन सा काम करनेकी निपुणता प्राप्तकी है। इस वातका ध्यान उस समूहके मनुष्यों मे नही होता, उन्हें चाहिए नौकरी, उनका पेट ख़ाली है, वह किसी प्रकार भरना चाहिए, इसके लिए नौकरी करनीहा पड़ेगी, नौकरी मिल जानी चाहिए, चाहे वे उस कामको करना जानते हों या न जानते हों। इसी प्रकारके दृश्य उस समाजमें दीख पड़ने सम्भव हैं।

काम लेनेवालोंकी दशा भी क़रीव क़रीव इसी प्रकारकी है। कारख़ानेके मालिकोंको आदमी चाहिए, आफ़िसके

लिए आदमी चाहिये। यहाँ अच्छे योग्य और काम जाननेवाले आदमियोंकी ज़रूरत है। कारख़ानेवाले परिश्रमी, विश्वासी और चतुर मनुष्य ढूँढ़ते हैं, अपने कारख़ानेके काममें अनुभव रखनेवाले मनुष्योंको ही वे रखना चाहते हैं और वैसे मनुष्यों को रखनाही उनके लिये लाभदायक है, पर उनको वैसे आदमी नहीं मिलते, आदमियोंका घाटा नही है, पर कामके आदमियों का अकाल है। अब कारख़ानेके मनेजर या आफ़िस के मालिक अपने मित्रोंसे आदमी ढूँढ़नेके लिए कहेंगे, अख़बारोंमें विज्ञापन छपवावेंगे, देखते देखतेही उनके यहाँ आवेदन-पत्रोंका ढेर जमा हो जायगा, एक दिन मनेजर साहब या मालिक ही आदमी चुननेके लिये बैठेंगे. उन्ही चिट्ठियोंमेंसे कुछ चिट्ठियाँ वे निकालेंगे, फिर उनमेंसे एक किसीको अथवा जितनेकी ज़रूरत हो उतनेको चुन लेंगे। उस आदमीको नौकरी मिल गयी। पर ऐसे बहुत कमही मिलेंगे, जो अपने चुने हुए मनुष्यसे, अपने पसन्द किये हुए नौकर से, प्रसन्न हों। इस प्रकार मालिक और नौकरके मनमुटावसे कारख़ानेकी उन्नति नही होने पाती, वर्षमें कई बार नौकर बदलने पडते हैं। जो नौकर नये आते हैं, उनका ज्ञान उस विषयमें तो कुछ होताही नही और कारख़ानेमें आतेही उनको अनुभवभी नही हो जाता, पर मालिक ऐसा नही चाहता, वह चाहता है काम, क्योंकि रुपया देता है, आपको अनुभव हो चाहे न हो, ज्ञान हो चाहे न हो, जब कारख़ानेसे रुपये लेते हैं तो आपको काम करना ही चाहिए। बस, इसी कारण नये नौकर से भी मालिक अप्रसन्न हो जाता है। ऐसो स्थितिमें क्या कोई कारखाना उन्नति कर सकता है।

इसी प्रकारके और भी कितनेही कुफल उस समाजको भोगने पड़ते हैं जिसने अपनी शिक्षा का प्रबन्ध स्वय नहीं किया है, जिसने अपनी आवश्यकताओंका निर्णय कर उसकी उपयोगी शिक्षा नही दी है। इस लिए सिद्धिनिर्वाचन करना अत्यन्त आवश्यक है।

एक बड़े विद्वान्का कहना है कि वह बड़े से बड़ा शक्तिशाली और धनी जीवनभी निर्बल तथा निःसार हो जाता है, जहाँ व्यवस्था नही है। व्यवस्थासे निर्बल जीवनभी बलवान् और शक्तिशाली हो जाता है। व्यवस्था तब तक नही हो सकती जब तक किसी काममें निपुणता प्राप्त न की जाय। जो मनुष्य किसी काममें निपुण है, उसे सदा यही इच्छा बनी रहती है कि अवसर मिले और मैं अपनी निपुणता दिखलाऊँ। अपनी दक्षता दिखाकर लोकसम्मान पानेका अभिलाषी कौन मनुष्य नही होगा। जो मनुष्य अपने काममें निपुण नही है, जो मनुष्य कोई काम इस लिए करता है कि उसका पेट भरे, उस काममें उसकी निपुणता है इस लिए नही करता, वह काम करते डरता है। नैाकरी के लिए उसे काम तो करना ही पड़ता है। पर वह अपने किये हुए कामको छिपाता है, क्योंकि अपनी अनभिज्ञता का उसे ज्ञान है। वह डरता है इस लिए कि मेरा काम मालिकके सामने न पड़ जाय. और मेरी नैाकरी न छूट जाय। ऐसा क्यों होता है? क्यों एक मनुष्यको अपने कार्यमें सिद्धि नहीं होती?

इसके अनेक कारण बतलाये जाते हैं। कुछ लोग भाग्य-दोष बतलाते हैं, कुछ लोग ग्रहोंका फेर बतलाते हैं और कुछ लोग देवता उपदेवता की क्रूर दृष्टि बतलाते हैं। पर हम लोगों को ऐसे कारण मान लेने का कुछ अधिकार नहीं है, जो वस्तु

आँखके ओझलमें है, उसको कारण बनानेका प्रयत्न करना विद्वानोंको पसन्द नही आता । अतएव एक विद्वान्ने कहा है कि प्रत्यक्ष कारणके रहते अप्रत्यक्ष कारण मानना या उस पर विश्वास करना अनर्थक है। यहाँ भी ऐसी ही बात है। इसका कारण एक साधारण ग़लती है। वह है अपने लिए काम का निश्चय न करना । पहले अपने लिए सिद्धिका निश्चय नहीं किया गया, पर जब सिद्धिकी आवश्यकता हुई। उस समय अपनी त्रुटियोंकी ओर ध्यान न देकर भाग्य, ग्रह आदि न मालूम कितनों ही का क्रोध अपने ऊपर प्रमाणित करनेका प्रयत्न किया जाने लगा । पूजापाठ किया जाने लगा, परन्तु क्या हो, ग्रहोंका तो कुछ दोष नहीं है । दोष है अपना, पर उस पर कोई ध्यान भी नही देता ।

जो रोग हो दवा भी उसीकी होनी चाहिये। जो स्वस्थ होना चाहे उसके लिए आवश्यक है, कि सबसे पहले वह अपने रोगका निश्चय करे और तब उसको दूर करनेका उपाय सोचे अथवा वैद्यसे उपाय पूछे। यही क्रम है रोग दूर करने और स्वस्थ होनेका। रोग है दूसरा और समझा जाता है दूसरा और इसी समझसे उसकी दवा भी की जाती है, फिर क्या होगा ? इसका फल भाग्यको दोष देने, देवता उपदेवताकी क्रूरदृष्टिकी कल्पना करनेके तथा पूर्व जन्मके संस्कारकी दुहाई देनेके अतिरिक्त और क्या हो सकता है ? आपने अपने लिए किसी सिद्धिका निश्चय किया ही नही, अपनी योग्यता और शक्ति उस सिद्धि को पाने के योग्य बनाया नहीं और चाहते हैं सिद्धि पाना ? कहिये क्या यह क्रम ठीक है ? क्या इस प्रकार आपको सिद्धि मिल जाय ?

संसारके सभी मनुष्य एक कामके लिए नहीं बनाये जाते अथवा योंं कहिये कि संसारके सभी मनुष्योंकी योग्यता शक्ति और बल समान नहीं होते, अतएव वे सभी किसी एक काममें सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकते और उनका ऐसा करना लाभदायक भी नहीं है। अतएव अमुक काम करनेसे अमुक मनुष्यको सिद्धि प्राप्त हुई, यह देखकर उसी काममें लग जाना उचित नहीं है। उस काममें लगनेके पहले अपनी ओर देखना चाहिये। अपनेमें कितनी योग्यता है, कितनी शक्ति है, आदि बातों का विचार कर लेना आवश्यक है। पुनः उस कामके लिए किस प्रकारकी योग्यता चाहिए इस बातकी ओर भी ध्यान देना चाहिये। उस कामके करनेके लिए जिस प्रकारकी योग्यता की अपेक्षा है, वैसी योग्यता अपनेमें है कि नहीं इसका पहले निश्चय करलो, तदनन्तर उस काममें लगो।

प्रत्येक मनुष्यमें एक प्रकारकी शक्ति, बल और योग्यता होती है। अतएव मनुष्यको अपनी शक्ति, बल और योग्यताका ज्ञान पहलेही कर लेना चाहिये तथा अपने योग्य सिद्धिका भी निश्चय कर लेना चाहिये। यही सीधा और सरल मार्ग है सिद्धि पाने का। सिद्धि पानेकी इच्छा शिक्षा और उत्साहके द्वारा परिपोषित होती है। बुद्धि और समाजकी अवस्थासे वह बाँधी जाती है। ऐसी इच्छा को कार्यक्षेत्रमें लगानेसे अवश्य मनुष्य सिद्धि पाता है। आप अपने हृदयको टटोलिये, देखिये उसमें कौनसी इच्छा प्रबल है। आपका उत्साह आपको किस ओर लेजाना चाहता है। किस ओर आपका अधिक प्रेम है, किस मार्गमें आप चलना चाहते हैं। समस्त कठिनाइयोंको कड़ेसे कड़े परिश्रमको उठा कर भी आप किस कामको करना

चाहते हैं? आदि बातोंको बिना निश्चय किये आपको किसी काममें भी प्रवृत्त नहीं होना चाहिये। इन बातोंके निश्चय हो जाने पर आप जो काम हाथमें लेंगे उसमें सफलता आपको अवश्य मिलेगी। आप प्रसन्न होंगे अपनी सफलता देखकर, समाज आपका आदर करेगा। आपको कभी भी देशसेवक-का स्वाँग रचकर नौकरी ढूढ़नेके लिए इधर उधर भटकना नहीं पड़ेगा और न परोपकारके लिए विज्ञापनबाज़ी ही करनी पड़ेगी। आपके कार्य स्वच्छ रहेंगे, उनमें किसीको भी चूँ करनेका अवसर नहीं रहेगा, कोई भी ननु नच नहीं कर सकेगा।

अपना काम जिस दिन आपको मिल जायगा, उस दिन समझिये आपको आधी सिद्धि प्राप्त हो गयी, आप कामको हाथमें लें और उत्साहपूर्वक आगे बढ़ते चलिए। ऐसा होने पर, आप अपना काम तो करही लेंगे और साथही समाजका भी कल्याण करेंगे। देशसेवाका स्वाँग रचनेवाले उस स्वार्थी मनुष्यकी अपेक्षा वह सच्चा पर सीधा व्यापारी देशका अधिक कल्याण करता है। अतएव अपना काम ढूढ़ना चाहिये, समाज-को धोखा देकर रुपया कमानेकी चिन्तामें अपना और अपने देशका नाश नहीं करना चाहिए। यह ठीक है, धोखेबाज़ीसे कुछ रुपये मिल जाते हैं, सफेद कपड़े और कुछ सोना चाँदी ख़रीदनेके लिए धन आ जाता है, मूर्ख लोगोंकी प्रतिष्ठाकी नज़र भी पड़ने लगती है। पर इसे जीवनकी सिद्धि नहीं कह सकते, इस उपायसे उस मनुष्यका जीवन उज्ज्वल नहीं हो सकता और न वह कोई चिरस्थायी फलही पा सकता है। आजकल एक प्रकारके सभ्य सफ़ेदपोश ठग उत्पन्न हुए हैं। उनमें काम करनेकी कुछभी शक्ति नहीं है। पर पेट पापी तो

मानता नहीं, इस लिए वे देश सेवाका पाठ पढ़ाना प्रारम्भ करते हैं, एक सभा स्थापित करते हैं, उन्हींके रङ्ग में रँगे कुछ और लोग भी आकर उसमें सम्मिलित हो जाते हैं। मेम्बर बनाये जाते हैं। फर्स्टक्लास, सेकेन्डक्लास, इन्टरक्लास, थर्डक्लास, आदि कई क्लासके मेम्बर बनाये जाते हैं। किसीने कुछ रुपये दिये, उसका चित्र चरित्र आदि छापा गया, भले ही वह किसी कामका न हो, भले ही उसने अपने जीवन भरमें बुरेसे बुरे काम किये हों, पर इससे क्या होता है। उसने मेम्बरी खाते कुछ रुपये जमा कर दिये। बस इस सुकर्मका ढिढोरा पीटा जाता है। वह संसारके सामने सर्वोत्तम पुरुषके रूपमें दिखाया जाता है। यह उपाय है, इससे कुछ रुपये भी मिल जाते हैं। पर ऐसे उपाय हृदयमें चोट पहुंचानेवाले होते हैं। पढ़े लिखे सज्जनोंके हृदयमें ऐसे काम चोट पहुंचाते हैं और इससे उन धोखेबाजोंकी कलई खुल जाती है। पीछे वे किसी कामके नहीं रह जाते हैं। धिक्कारे और दुतकारे जाते हैं। पैसा मिलना कठिन हो जाता है।

अतएव इस प्रकारके धोखेबाजोंके मार्गका अनुसरण कभी भी मत करो। ऐसे लोग स्वय तो बिगड़ते ही हैं, साथ ही वे समाजके सामने बहुत बुरा आदर्श उपस्थित करते है। ऐसे लोग रुपये ऐंठनेके लिए लोगोंकी झूठी खुशामद करते हैं। उनको झूठा बढ़ावा देते हैं, वे व्याख्यान वेदीपर खड़े होते हैं और गला फाड़ फाड़कर चिल्लाते हैं—संसार में कुछ भी असम्भव नही, असम्भव शब्द मूर्खोंके कोशमें लिखा है, आगे बढ़ो। उनकी ऐसी बातोंमें बहुत लोग आ जाते हैं और ऊंचे चढ़ने लगते हैं इसका फल क्या होगा। इसी प्रकार कितनेही मनुष्योंका जीवन नष्ट हो गया, वे घरके रहे न घाटके।

हिन्दीके समाचार पत्र पढ़नेवाले इस बातको जानते हैं, कि बहुतसे मनेजिंग एडिटर हिन्दी संसारको खरी खोटी सुनाया करते हैं। सम्पादक महाशयका यह कहना होता है कि हिन्दी भाषियोंमें अभी समाचार पढ़नेकी योग्यता उत्पन्न नहीं हुई, इसी लिए हमारे समाचार पत्रको घाटा उठाना पड़ता है। बात ठीक है, हिन्दी संसारमें पत्रपाठक कम हैं, ऐसी अवस्थामें सम्पादकोंकी भी तो वृद्धि नहीं होनी चाहिए। पत्र चलता है पढ़नेवालोंके भरोसे, जब पढ़नेवाले नहीं अथवा कम हैं, फिर सम्पादक महाशय क्यों बढ़ते जाते हैं? यदि वे बढ़ेंगे तो फिर घाटा होना अनिवार्य है। अच्छा-मानलो पढ़नेवाले कम हैं, पर क्या वे बढ़ाये नही जा सकते, क्या सम्पादक महाशयने इतनी योग्यता प्राप्त की है कि जिस के सैारभसे पाठकगण आकृष्ट हो सकें, यदि इसका उत्तर 'हां' है तो फिर रोना काहेका, क्योंकि दूसरे हिन्दी पत्र चल रहे हैं और प्रकाशकोंको उससे कुछ लाभही है, क्यों, इसका कारण सम्पादककी योग्यता है। यदि उसका उत्तर "ना" है तो मैं कहूंगा कृपाकर सम्पादनका व्यवसाय छोड़ दीजिए, कहीं क्लर्की या और कुछ व्यवसाय अपने लिए सोचिए। अनधिकार चर्चा अच्छी नहीं, ऐसा करनेसे हिन्दी पाठकोंको कोसनेसे सम्भवतः आप प्रसन्न हो जायं तो हो सकते हैं किन्तु आर्थिक लाभ कुछ भी नहीं होगा? स्वल्पज्ञान सम्पन्न सम्पादकोंके मुंहसे ऐसी बात सुनकर उनके अहङ्कार पर आश्चर्य होता है और उनके साहस पर दुःख।

जितना बड़ा तावा होता है, रोटी भी उतनी ही बड़ी बनायी जाती है, लोटा ढालनेका सांचा लोटेके समान ही होना चाहिए। इसी प्रकार यह मनुष्यभी किसी खास कामके

लिए पैदा हुआ होता है। जिसमें सत्य बोलने का माद्दा नहीं, जो सत्य बातें प्रकाश करनेके कारण अनेक कष्टोंको सहने में गर्व अनुभव करना न जानता हो, जो अपने सिद्धान्तोंके लिए सांसारिक सुखोंको जलाना न जानता हो जिसने भूयोदर्शनसे संसारकी जातियोंके उत्थान तथा पतनका इतिहास न जान लिया हो, जिसमें स्वार्थके कारण अपना कर्तव्य निश्चित करनेकी आदत न हो और जो प्रकृतिके सूक्ष्म परिवर्तनोंको न समझता हो, भला उसे क्या अधिकार है कि वह सम्पादकके पदके लिए आवेदन पत्र भेजे। उसके लिए तो सबसे उचित यह है कि वह कहीं क्लर्की करे अथवा कहीं मजूरी, उसे अपने पाठकोंको उलहना देनेका कुछ भी अधिकार नहीं है।

इसी नासमझी जल्दबाजी और अहङ्कार के कारण कितने ही होनहार मनुष्योंको अपने जीवनके उत्तम लक्ष्यसे विमुख होना पड़ा है। हमारे एक मित्र हैं, उनको दर्शन शास्त्रोंका अध्ययन बहुतही पसन्द है। वे सदाही किसी न किसी दार्शनिक सिद्धान्तपर विचार किया ही करते हैं। दर्शन शास्त्र संबन्धी कई नये नये सिद्धान्त उन्होंने सोचे हैं, पर पेट के लिए उन्हें पोस्टमास्टरीका काम करना पड़ता है। कहां दर्शन शास्त्रोंके गहन विचार और कहां पोस्टआफिसका काम। वे विचारे किसी ओर भी सफल नहीं हो पाते। न तो वे अपना दार्शनिक अनुसन्धानही कर सकते हैं और न पोष्ट विभागमें ही ऊंचा पद पाते हैं। इसी प्रकार एक सज्जन कवि हैं, उनको कवितामें आनन्द आता है, प्रकृतिकी छटा देखनेके लिए उनका हृदय उत्कण्ठित रहता है, पर उनको व्यापारका काम करना पड़ता है। भला कविता और व्यापारका

कहीं साथ हो सकता है। नहीं, इसी लिए ये सज्जन अपने काममें सफल नहीं होते। सफल हों भी तो कैसे हों, हृदय किसी दूसरी ओर ले जाता है, पर आप दूसरी ओर जाना चाहते हैं। आपका ध्यान कभी अपने कामकी ओर और कभी हृदयके कामकी ओर जायगा। वस, आप वीच हीमें रह जायंगे। आगे तो वढ़ही नहीं सकते, जहांके तहां रहना भी कठिन हो जायगा। क्या वह मनुष्य चित्रकार हो सकता है, जिसके हृदयमें प्रकृति सौन्दर्य देखनेकी उत्कण्ठा नहीं। मेरी रायसे ऐसे लोगोंको मजूरी ही करके किसी प्रकार अपना दिन विताना चाहिए। इसीमें उनका और उनके समाजका कल्याण है।

आप जाइए संसारमें घूम घूम कर देखिए, कितने ही अच्छे अध्यापक होनेकी योग्यता रखनेवाले मनुष्य क्लर्की करते हैं, कितने ही चित्रकार होनेकी योग्यता रखनेवालेको कुछ और ही काम करना पड़ता है, इस अविचारसे संसार की शान्ति और सुखमें जो वाधा आती है, वह किसीसे छिपी नहीं है और उन मनुष्योंका जीवन जो नष्ट होता है, उसकी कोई गणना ही नहीं।

इस कारण सवसे पहले इस वातकी ओर ध्यान देना चाहिए कि हम क्या काम करेंगे, हमारी और हमारे समाजकी परिस्थितिके अनुसार कौनसा काम हमारे लिए उपयुक्त होगा। इसके निश्चय हो जानेपर अपनी शक्ति योग्यता और वलकी ओर देखो। विचार करो कि ये उस कामको करनेमें तुम्हारी सहायता कर सकते हैं अर्थात् उस कामको करने योग्य शक्ति वल और योग्यता तुममें है कि नहीं। यदि है तव तो वड़े आनन्दकी वात है, काममें लग जाओ, निस्सन्देह लाभ

होगा। यदि तुमको मालूम पड़े कि उस कामके करनेके योग्य बल शक्ति योग्यता आदि तुममें नहीं है, तो कुछ ठहर जाओ, पहले अपनी शक्ति योग्यता तथा बल आदिके बढ़ानेहीकी ओर ध्यान दो। जब देखो कि तुम उस कामके पूरे योग्य हो-गये हो, तब तुम उस काममें लग सकते हो।

बहुत लोग सिफ़ारिशके भरोसे सिद्धि पानेकी आशा करते हैं। उनका कार्यक्रम इस प्रकारका होता है, वे सबसे पहले किसी प्रभावशाली मनुष्यसे मिलते है, उसकी खुशामद करते हैं, उसके लिए बाजारसे सामान खरीदकर लाते हैं, उसके लड़कोंको खेलाते हैं, कभी कभी उसके लिए अपने यहांसे कोई वस्तु लाकर देते हैं। इस प्रकार कई उपायोंसे श्रीमती और श्रीमान्‌को खुशकरने के उपाय रचेजाते हैं। वे प्रभावशाली मनुष्य यदि कुछ समझदार हुए, तबतो ऐसोंके फन्देमें फँसते नहीं, पहलेही उनको मना करदेते अथवा उनकी वस्तुओंका मूल्य देदेते हैं, यदि वे प्रभावशाली पुरुष समझदार न हुए, तो वैसोंका मक्कर सफल हुआ समझिए। इस प्रकार वे उस प्रभावशालीको अपने प्रभावमें लाकर रख छोड़ते हैं और अवसर ढूढ़ा करते हैं, जब कोई नौकरी कहीं खाली हुई, झट वे उस बड़े आदमीसे सिफ़ारिश कराते हैं। कारखानेका मालिक जब देखता है कि एक बड़ा आदमी इस मनुष्यके लिए सिफ़ारिश करता है, तब उसकी समस्त योग्यता कारखानेके मालिकके ध्यानमें आजाती है। वह उस बड़े आदमीके बड़प्पनके रोबमें आकर उस मनुष्यको रखलेता है। वह जब कारखानेमें पहुंचा तब काम करनेकी ओर तो उसकी प्रवृत्ति होतीही नहीं, वह वहां भी छल कपटके द्वारा काम चलाना,चाहता है। मालिकको प्रसन्न रखनेके लिए वह उपाय सोचने लगता है, मालिकके

साथ साथ घूमना, उनके निजके काममें योग देना और अपने साथ तथा अधीन कामकरनेवालों पर दवाव डालना आदिको ही वह अपना कर्तव्य समझलेता है । वहुतसे मूर्ख मालिक इस फन्देमे फँसजाते हैं और उस एककी खुशामदके कारण अपने कारखानेको गहरा नुक़सान पहुंचवाते हैं। पर जो मालिक बुद्धिमान है, वह तीखी नजरसे उस आदमीका काम देखा करता है, वह उससे पूछता है कि आपने क्या काम किया है, कितना किया है, मैं देखना चाहता हूं। उस समय वह मनुष्य मनही मन बहुत कुढ़ता है। मालिककी निर्बुद्धिता पर उसको वड़ा दुःख होता है। पर क्या करे, मालिककी आज्ञाका पालन करनाही पड़ता है, वह जाता है, मालिकके सामने काम वतलाने, वड़े परिश्रमसे सोच विचारकर वह काम वतलानेके लिए खड़ा होता है, पर दिखलावे क्या, काम कहांसे लावे उसका काम तो परोक्ष होता है, प्रत्यक्ष काम जो होता है सो ऐसा होता है कि वह मालिकको दिखाने लायक नहीं होता। चालाकीका अन्तही समझिए, खुशामद किसी काम न आयी, इतने वड़े आदमीकी सिफ़ारिश भी योंही रहगयी, मालिकने कह दिया कि आपको काम करनेका अभ्यास नहीं है, हम काम करनेवाला आदमी चाहते हैं अतएव आप अपने लिए कोई अच्छा और उपयुक्त स्थान ढूढ़िये । अव उनको वह स्थान छोड़ना पड़ा। स्थान छोड़नेके पहले उनकी कीर्त्ति चारो ओर फैल गयी। आफिसके उन मनुष्योंने—जिनको वे दवाते थे—उनकी कीर्त्ति फैलायी। वे जनसमाजमे परिचित हुए। पहलेके वे वड़े आदमी भी उनसे अव अप्रसन्न होगये, क्योंकि वे समझते हैं कि इस मनुष्यके कारण हमारी गम्भी-रतामें कुछ अन्तर आगया है। अस्तु, कुछ दिनोंतक तो इसी

प्रकार चलता है । पर वहुत दिनातक वे कैसे वैठे रहसकते हैं। उन्हें नौकरीकी ज़रूरत होती है । यदि अवकी वार वे सुधर गये और काम करने लगे तव तो कोई कठिनता ही नहीं। यदि नही सुधरे, उन्हें अपनी ,पुरानी आदत छोड़नी कठिन मालुम हुई और उसी खुशामदाने ढङ्गको काममें लाना उन्होंने शुरू किया, समझ लीजिए, वह दूसरा स्थानभी उनके लिए नही है, वहांभी वे वहुत दिनोंतक ठहर नही सकते । एकदिन वह स्थानभी छोड़ना पड़ता है और दूसरा स्थान ढूढ़ना पड़ता है, इसी प्रकार उनका समस्त जीवन नौकरी ढूढ़तेही वीतजाता है। सिद्धि तो दूरकी वात है, खाना मिलना कठिन होता है। अतएव तुम लोगोंको इस परिणाम-भयङ्कर उपायका अवलम्वन न करना चाहिए, यह कोई वुद्धिमानी नही है, शरीरको वचानेके लिए अपने आलस्यकी रक्षाके लिए वतलाओ तुम्हें कितने कितने झूठे और सच्चे उपाय अवलम्वन करने पड़ेंगे। कभी काम न करनेके लिए वीमारीका ढोंग रचना पड़ता है, कभी किसी दूसरेका दोष वतलाना पड़ता है। इसी प्रकार सदा तुम कोई न कोई कारण ढूढ़ा करते हो और लोगोंको वतलाया करते हो कि इस कारण मैं काम नही कर-सका । पर स्मरण रक्खो, यह तुम्हारी चालवाजियां वहुत दिनोंतक चल नही सकती । एकदिन लोग तुमको झूठा समझलेंगे, आलसी अकर्मण्य समझलेंगे, तुमको प्रतिष्ठाकी दृष्टिसे न देखेंगे। तुम्हें जो स्थान पहले प्राप्त रहेगा, उससे तुम स्वयंही गिर जाओगे।

तुमको सीधे मार्गका अवलम्वन करना चाहिये। तुमने अपने लिए कार्य निश्चय कर लिया, अपनी शक्तियेंाको भी खूब परख लिया है। अच्छा, अब अपने लिए स्थान निश्चित करो।

किस स्थानपर रहकर तुम काम करना चाहते हो, और साथही यहभी विचार लो कि कैसे लोगोंके साथ रहकर तुम काम करना चाहते हो। इन बातोंके निश्चय हो जाने पर उन लोगोंको सूचित-करदो कि महाशय, मैं आपके कारखाने में आपके साथ रहकर काम करना चाहता हूं, उनसे पहले रुपये न मांगो, वेतन पहले क्यों मांगते हो? उन लोगोंसे तुमको साफ कह देना चाहिये, "महाशयो, मैं काम करना चाहता हूं, बैठे बैठे मेरा चित ऊब गया है, मुझे वेतनकी आवश्यकता नहीं है,। आवश्यकता है आपकी आज्ञाकी, जो आपके कारखानेमें काम करनेका अधिकार हमको दें। तुम्हारे इस पत्रको पाकर वह तुमपर प्रसन्न होगा, वह तुमको अपने पास बुलाकर कहेगा, हमारे कारखानेमें अमुक अमुक काम हैं, तुम अपने लिए इनमेंसे कोई चुनलो। अपनी इच्छाके अनुसार तुम अपने लिए काम चुनलो। उस कामको बड़ी मुस्तैदीके साथ करो। तुम अपनी उज्ज्वलता दिखलाओ. मालिकको दिखलाओ कि मेरे द्वारा तुमको इतना लाभ हुआ। परन्तु यह बात शब्दसे मत कहो, किन्तु कार्यसे। तुम्हारे कामसे जो लाभ हो वह इतना स्पष्ट हो कि सभी उसको समझ लें। इस प्रकार करनेसे थोड़ेही दिनोंमें तुम उस कार-खानेके एक मुख्य अङ्ग होजाओगे। कारखानेका मालिक तुम-पर अत्यन्त प्रसन्न होजायगा। उसको मालुम होगा कि तुम्हारे द्वारा उसके कारखानेको लाभ होरहा है। तुम्हारे कामसे तुम्हारी ईमानदारीसे मालिकका हृदय दब जायगा, वह चाहेगा कि तुम उससे कुछ लो। वह चाहेगा कि तुम्हारे द्वारा कारखानेको जो लाभ होरहा है उसमेंसे थोड़ा तुमभी लेलो। इस प्रकार तुम्हारी आमदनीकीभी सूरत निकल

आवेगी। इस प्रकारके अनेक उदाहरण हैं। मेरी समझसे सिद्धिनिर्वाचन करनेके पश्चात् इसी मार्गका अवलम्बन करना चाहिए, क्योंकि इसका फल चिरस्थायी है।

आजकल हमारी जातिमें अनुकरण प्रियताका बड़ा जोर है। आप जिस ओर देखें उसी ओर इसीका दौरदौरा दिखायी पड़ेगा। अनुकरण बुरा नहीं है, पर उससे सब समय और सबको लाभही होगा यह विश्वासभी अच्छा नहीं है। कई स्थान हैं जहां अनुकरणसे लाभ होता है। चाहे कोई किसीके गुणका अनुकरण करे उससे लाभही होगा, पर आप किसीकी कार्यपद्धतिका अनुकरण करें उससे लाभ होनेकी सदा सम्भावना नहीं है। कभी लाभभी होसकता है, पर उसका निश्चय नहीं। अतएव हर काममें अनुकरण अच्छा नहीं है। एक समय था, कुछ लोगोंने रुपये कमानेकी नयी तर्कीब सोची। विलायती दवा बेचनेवालोंके ढङ्गपर यहां भी दवा बेचीजानेकी दुकानें खुलगयी। विज्ञापन प्रकाशित किये गये, समाचारपत्रोंके द्वारा बाँटे गये गलियोंमें, सड़कोंपर, ऊंचे मकानोंपर चिपकाये गये। उनपर लोगोंकी आखें पड़ीं, उन विज्ञापनोंमें लिखी वस्तुओंमें से जिसको जिस वस्तुकी आवश्यकता थी उसने वह वस्तु मंगवायी, दवाकी विक्री होनेलगी, आमदनीभी होनेलगी। कहाजाता है कतिपय दवा बेचनेवालोंकी आमदनी खूब बढ़गयी और वे दवा न भेज सकनेपर लकड़ीके बुरादे भेजकर अपनी दुकानें चलाने लगें। आमदनी होनेपर उन विज्ञापनसर्वस्व मनुष्योंकी आकृतिभी बदली। यह बात औरोंने भी देखी। उन लोगोंकी भी इच्छा रुपये कमानेकी हुई। आदर्श सामने था। एक मनुष्यने जैसा विज्ञापन दिया था उसी प्रकारका विज्ञापन दूसरे मनुष्यने भी दिया।

एक मनुष्यकी दवाका जो नामथा, वही नाम दूसरोंने भी रखा, उसकी दवासे जितनी बीमारियां दूर होती थीं दूसरेकी दवा· से भी वेही बीमारियां दूर होनेलगीं। इस प्रकार एकको देखकर दूसरा और दूसरेको देखकर तीसरा काम करने लगा। इस प्रकारके भेड़िधसानका फल अच्छा नहीं हुआ। इन दवा वेचनेवालोंके कुकृत्योंसे लोग ऊबगये। चारो ओर इनकी निन्दा होनेलगी, इनपरसे लोगोंका विश्वास जाता रहा, इनके कारण देशी आयुर्वेदकी ओरसे भी वहुत लोगोंने मुंह फेर लिये। इन सज्जनोंके कारण प्राचीन विद्याकी भी निन्दा होने-लगी। यह कौन कह सकता है कि मेडिकल रजिस्ट्रेशन-एक्टके जन्मके प्रधान कारण ये नहीं हैं?

इनकी करतूतोंसे अव कोई सच्चाभी दवा वेचनेवाला वेइमान समझाजाता है। उसकी वातों पर भी लोगोंका विश्वास नहीं रहा। क्योंकि सच्चे झूठेका कोई पहचान तो है ही नहीं। इस देखादेखीसे इस अनुकरणप्रियतासे एक अच्छा रोजगार मिट्टीमें मिल गया। एक उपयोगी विद्या उपहसनीय वन गयी। इसी प्रकार दूसरी ओर भी देखिए। अङ्गरेज़ी पढ़े लिखोंमेंसे पहले कुछ लोग वकील वनें, उनको अच्छी आमदनी हुई। यह देखकर वकील वढ़ने लगे। आप कचहरियोंमें जाकर देखें वकीलोंका ठट्ठका ठट्ठ दीख पडेगा। इनकी अधिकतासे इनकी आमदनी कम होगयी। इस समय वकीलोंकी ओर अंगुलियां उठायी जानेलगीं। सरकारको कानूनके द्वारा कहीं कही इनकी संख्या नियत करनी पड़ी।

यह क्यों? इसका उत्तर साफ है और वह यह है कि इन लोगोंने पहले अपनी शक्तियोंकी जांच परताल नहीं की है। किस कार्यकी ओर उनका स्वाभाविक झुकाव है, इस वातका

विचार नहीं किया। उन लोगोंने इस दृष्टिसे अपना काम प्रारम्भ नहीं किया, कि हमको काम करना है किन्तु उनका काम प्रारम्भ हुआ है रुपयेके लिए, पर रुपया क्या बिना काम किये मिलता है। रुपया तो कोई वस्तु नहीं है, वह है केवल शक्तिव्ययका मूल्य। जिस कामके लिए आपने जितनी शक्ति ख़र्चकी है, उसी परिमाणमे आपको उसका मूल्य मिलेगा। जिसको कानूनका ज्ञान नही, अपने अभिप्रायों और भावोंको स्पष्ट प्रकाशित करनेके उपयुक्त जिसको वाणी नही, क्या आवश्यकता है कि वह वकालतकी परीक्षा दे, यदि वह वकालतकी परीक्षामें असफल हो, उसका वकालती व्यवसाय न चले तो इसमें दोष किसका है। इसी प्रकारके अनेक उदाहरण दिये जासकते हैं। जिनसे इस बातका पता लगता है, पहलेसे अपनी और अपनी शक्तियोंकी बिना परीक्षा किये जो काममें लगजाते है उनको कितनी कठिनाई उठानी पडती है, साथही एक अनुपयुक्त मनुष्यको उत्पन्नकर समाजको कैसी असुविधा भोगनी पड़ती है। अतएव कार्य प्रारम्भ करनेके पहले इन बातोंको खूब सोच विचार लो। देखादेखीसे कभी सिद्धि नही मिल सकती। आपकी सिद्धि आपकी शक्तियोंकी ओर देखती है॥

कार्यशक्ति, अधिकार और दृढ़ता ।

कार्यशक्तिका विचार किया, वह किस परिमाणमें है, इसका ज्ञान प्राप्त किया । स्वाभाविक जो कार्यशक्ति है उसके द्वारा अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होसकती है कि नहीं, इसका अनुभव किया । इतना होनेपर यदि अपनी शक्तिमें तुमको अल्पता मालुम होती है, तो पहले अपनी शक्तिको बढ़ाओ, उसे बली और दृढ़ बनाओ, जबतक तुम्हारी शक्ति खूब बलशाली नहीं होजाती, तबतक उस कामको कभी न छेड़ो । यदि तुम अपनी शक्तिकी ओर न देखोगे, अपने बलाबलका बिना विचार किये ही यदि तुम किसी कामको प्रारम्भ करदोगे तो इससे लाभ नहीं होगा । जिस कामको पूर्ण करनेकी शक्ति तुम्हारे पास नहीं है, उस कामको तुम कभी पूरा नहीं करसकते, किन्तु उस कामको प्रारम्भ करनेसे जो थोड़ी बहुत तुम्हारे पास शक्ति है, वहभी नष्ट होजायगी । जिस कामको तुम पूरा करना चाहते हो तुम्हारा वह काम तो पूरा होहीगा नहीं और शक्तिके नाश होजानेसे दूसरे छोटे बड़े कामोंके करने योग्यभी नहीं रह जाओगे । इस कारण सिद्धि प्राप्त करनेवालेको सबसे पहले अपनी शक्ति अपने बल और अपनी योग्यताकी ओर ध्यान देना चाहिए, इनके बढ़ानेका प्रयत्न करना चाहिए । जिसके पास कलकत्ते जानेके लिए पूरा रेलभाड़ा नहीं है, जिसके पैरोंमें वहां पहुंचनेका बल नहीं है, उसे कलकत्तेकी यात्राकी इच्छा नहीं करनी चाहिए, ऐसा करना उसके लिए हानिकारी होगा । उसका मनोरथ सिद्ध नहीं होसकता । वह कलकत्ते नहीं पहुंच सकता । हां, उसके पास जो कुछ थोड़ा बहुत धन है, वहभी खर्च होजायगा, वह दूसरे कामके योग्यभी

नहीं रहजायगा। अतएव सबसे पहले उसका कर्तव्य यह होना चाहिए कि वह कलकत्ते जानेके लिए पूरा किराया एकत्रित करे, अथवा अपने पैरोंको बलवान् बनावे फिर कलकत्तेकी यात्रा करे, ऐसा करनेसे उसको सिद्धि प्राप्त होगी, वह कलकत्ते पहुंच जायगा।

बहुत लोगोंको अपनी शक्तिकी अल्पताकाभी ज्ञान रहता है, वे जानते हैं कि मेरी शक्ति अल्प है और जिस कामको मैं प्रारम्भ करना चाहता हूं उसके लिए बड़ी शक्तिकी आवश्यकता है। तथापि वे उस कामको प्रारम्भ करदेते हैं। वे समझते हैं कि मैं कार्य सिद्ध करलूंगा। उनकी यह कार्य प्रारम्भ करनेकी शीघ्रता अपने भरोसेपर नहीं होती, किन्तु दूसरोंकी शक्तिके भरोसे। वे समझते हैं कि मुझे अमुक अपने मित्रसे अपने सम्बन्धीसे सहायता मिलेगी और मेरा काम सिद्ध होगा। पर इस नीतिकी प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। दूसरोंके भरोसे सिद्धि प्राप्त तो होतीही नहीं और यदि किसीको सिद्धि प्राप्त होजाय तो वह निन्दित सिद्धि समझनी चाहिए, उस सिद्धिसे लाभकी अपेक्षा हानि अधिक होती है।

सोचनेकी बात है कि जिस प्रकार एक मनुष्यको सिद्धिकी आवश्यकता है उसी प्रकार दूसरेकोभी तो है। दूसराभी अपने जीवनको सिद्धिप्राप्त कर सुखी और कृतार्थ बनाना चाहता है। ऐसी स्थितिमें क्या यह सम्भव है कि वह अपनी शक्तिको दूसरेके लिए खर्च करदे और उससे स्वयं वह लाभ न उठावे। मानलो कि किसीकी शक्ति अधिक है, और उसने तुमपर दयाकी तथा दया करके कुछ सहायता दी। उस समय तुमको आनन्द मालुम हुआ, और तुमने अपने सहायकको आशीर्वाद दिया, धन्यवाद दिया। पर ध्यान रखो उस सहा-

यतासे तुमको पूरी सिद्धि प्राप्त न होजायगी। उस सहायताके पानेसे तुम्हारी ऐसी अवस्था नहीं होजायगी कि तुम अपने समस्त अभावोंको मिटालो। तुम्हारी सब आवश्यकताएँ दूर होजायँ। तुम्हें सिद्धि नहीं प्राप्त होगी और तुम्हारी आवश्यकताएँ बनी रहेंगी। उनको दूर करनेके लिए तुमको पुनः व्यापार करना पड़ेगा। पर तुमने तो व्यापारका अभ्यास किया ही नहीं है। तुम स्वयं परिश्रम करना जानतेही नहीं । क्योंकि तुमने इसका अभ्यासही नहीं किया है। तुम्हें अभ्यास है सहायता पाकर काम करनेका। एक बार तुम्हें सहायता मिली थी और उससे तुमने कुछ कामभी किया था। अब तो वह सहायता नष्ट होगयी. अर्थात् उस सहायताका फल तुमने भोगलिया है । अब बतलाओ तुम्हारा काम कैसे चले। तुम पुनः सहायता पानेके लिए प्रयत्न करोगे। इधर उधर दौड़धूप करोगे जिससे कुछ सहायता मिलजाय। यदि पुनः सहायता तुम्हें मिलगयी तो तुम बहुत आनन्दित होओगे। सम्भवत. तुमको गर्व भी हो अपनी सिद्धिपर। पर जब तुम परिणाम सोचोगे, जब उस सहायताका फल तुम भोग चुकोगे, उस समय तुमको अन्धकार दिखलायी पड़ेगा। उस समय तुम व्याकुल होजाओगे । अब तुमको स्वयं लज्जा मालुम पड़ेगी, सहायता मांगते। पर तुम सहायता मांगोगे अवश्य, क्योंकि लाचार हो, कोई गति नहीं है। जब तुम सहायता पानेकी इच्छासे अपने सहायकके सामने जाओगे, उस समय वह तुमको देखेगाभी नहीं, यदि देखेगाभी तो बुरी नजरसे। उस समय तुम्हारे हृदयकी दशा विलक्षण होजायगी। तुम समझोगे कि हमसे घृणा करता है, तुम समझोगे कि धनके उन्मादसे उन्मत्त हुआ है और मुझे दरिद्र समझकर मेरा उपहास करता है। इन सब बातोंको सोचकर तुम मनही मन उसकी निन्दा

करोगे, उसको कोसोगे, पर ऊपरसे उसकी कृपा भिक्षाके लिए व्याकुल रहोगे। जी चाहेगा कुछ देदेगा। नहीं तो रूखे शब्दोंसे तुमको विदा करदेगा। बतलाओ उस समय तुम्हारे हृदयकी क्या दशा होगी, उस समय संसारका चित्र तुम्हारे सामने किस रूपमें आकर उपस्थित होगा। उस समय तुम सभीको विश्वासघातक समझोगे सभी क्रूर तुमको दीख पड़ेंगे, मनुष्योंकी सूरत देखते तुमको घृणा आवेगी। इस प्रकार तुम संसारके लिए नितान्त अयोग्य होजाओगे। इसका कारण मालुम है। नहीं तो सुनो, तुमने अपने लिए उचित कार्य पद्धतिका अवलम्बन नही किया। सिद्धि पानेके लिए जिस मार्गसे जाना आवश्यक है, तुमने उस मार्गको छोड़दिया। तुमने स्वयं अपनेको धोखा दिया है। दूसरोंकी सहायता पर अवलम्बित होकर तुमने अपनी कार्यशक्तिका नाश किया है। तुम संसारको क्रूर समझते हो, पर वास्तवमें संसार क्रूर नहीं है, तुम जिन कारणोंसे संसारको क्रूर समझते हो, उनसे संसारकी क्रूरता साबित नहीं होती। उनसे तुम्हारीही क्रूरता मालुम होती है। क्या तुम समझते हो कि उचित मार्गके त्यागनेसे संसारवासियोंको सुख मिला है, उनको सिद्धि मिली है, नही, विलकुल नहीं, ऐसा समझनेवाले मूर्ख और उन्मत्त हैं। वे चाहते हैं कि मैं जिस तरह चाहूं, उसी तरह मुझे सिद्धि मिले, वे चाहते हैं कि मुझे कुछभी प्रयत्न न करना पड़े और सिद्धि मिलजाय। पर ऐसा होना असम्भव है। सिद्धि पानेके लिए सिद्धिके मार्गपर चलनेकी आवश्यकता है। मांगी याची सहायतासे आजतक किसीको भी सिद्धि नही मिली है और मिलनेकी आशा भी नहीं है। क्योंकि उस मार्गसे तुम चलतेही नही जिसपर चलनेसे सिद्धि प्राप्त होती है। दूसरोंकी

सहायतासे सिद्धि पानेकी आशा कितनी भयानक है, इस बातको समझलेना अब कुछ कठिन नहीं है। सिद्धि प्राप्त होती है अपने भरोसे, अपनी शक्तिके भरोसे और अपने बलके भरोसे।

जिस वस्तुका उपयोग न कियाजाय वह वस्तु निकम्मी होजाती है। उसकी सब शक्तियां निरर्थक होजाती हैं। यदि कोई मनुष्य जनसमाजसे अलग कर दियाजाय, उसको किसी भी मनुष्यसे बातचीत करनेका अवसर न दिया जाय, ऐसी अवस्था यदि दस पांच बरस रहे तो इसका फल क्या होगा? वह मनुष्य बोलना भूल जायगा। वह अपने हृदयके भावोंको उचित रीतिसे प्रकाशित न करसकेगा। क्यों? इसलिए कि उसने एक दीर्घकालके लिए बोलनेका अभ्यास छोड़ दिया है। यही दशा उन मनुष्योंकी भी होती है, जिन्होंने अपनी कार्य शक्तिका उपयोग नहीं किया है, जिन्होंने दूसरोंकी सहायताके भरोसे सिद्धि प्राप्त करनेका निश्चय किया है। उनकी कार्य शक्ति नष्ट अथवा निर्बल होजाती है। सहायता भी बहुत दिनों-तक नहीं मिलती, काम करनेकी शक्ति भी नहीं, बतलाइए, कैसी भयानक अवस्था है उस मनुष्यका जीवन कितना दुःख-मय होगा इसकी कल्पना कीजिए। फिर क्यों न उचित मार्गका अवलम्बन किया जाय, पहलेसे उचित मार्गपर चलकर क्यों न सुखका मार्ग साफ करलिया जाय। टूटकर आपड़नेवाले दुःख-के पहाड़ोंका पक्षच्छेदन क्यों न पहलेहीसे करदिया जाय। क्यों न वह घरके पासवाला गढ़ा पाट दियाजाय, जिसमे गिरकर बच्चोंके मरनेका भय है। वह मार्ग है अपनी कार्य-शक्तिका उत्तेजन करना और उसको लेकर जीवनक्षेत्रमें काम करनेके लिए उतर पड़ना।

प्रत्येक मनुष्यमें कुछ न कुछ कार्यशक्ति होती है, मनुष्यको चाहिए कि अपने लिए पहले कोई काम चुनले। उस चुने हुए कामको करने लगजाय। उसकी कार्यशक्ति उसके साथ है। उसको सिद्धि मिलेगी, अवश्य।

अमुक काममें अधिक लाभ है, अमुक मनुष्यने अमुक कामके करनेसे अधिक लाभ उठाया है, इस बातका विचार करना अनावश्यक और हानिकारी है। लाभकी दृष्टिसे काम प्रारम्भ मत करो किन्तु तुमको काम करना है, इसलिए काम प्रारम्भ करो। क्योंकि बहुतसे ऐसे काम हैं जिनके करनेसे लाभ होता है, फिर तुम किस कामको प्रारम्भ करोगे और किसको नहीं। यदि लाभकी दृष्टिसे तुम काम प्रारम्भ करना चाहते हो तो एक किसी कामको प्रारम्भ करोगे जिसमें लाभ होनेकी सम्भावना तुम्हारे मतसे होगी, जब तुमको कोई और दूसरा काम लाभदायक मालुम पड़ेगा तब तुम उसीमें लग-जाओगे। इस प्रकार तुमको अपने जीवनका अधिक भाग कामोंको प्रारम्भ करतेही करते बीत जायगा। अतएव तुम किसी कामको इसलिए प्रारम्भ करो कि तुमको काम करना है। जब तुम अपनी कार्यशक्तिके अनुसार अपने लिए काम चुनलोगे और उसको सिद्ध करनेके लिए लग जाओगे, उस समय तुम्हारी कार्यशक्तिका प्रकाश होगा। काम किस तरह करना चाहिए इसका ज्ञान तुमको होजायगा, साथही साथ तुम्हारी शक्तियां भी बढ़ती जायंगी, और उस कामका रूप भी बदलता जायगा, जिसको तुमने प्रारम्भ किया था। जिस समय तुम्हारी शक्ति थोड़ी थी, उस समय तुम्हारा प्रारम्भ किया हुआ काम भी लोगोंकी दृष्टिमें छोटा जँचता था, पर काममें ज्यों ज्यों तुम अपनी शक्ति लगाओगे त्यों त्यों तुम्हारी

शक्ति भी बढ़ती जायगी और साथही वह काम भी। क्या पापड़ बेचनेवालोंको नगर सेठ बनते तुमने नहीं देखा है।

उसदिन बम्बईकी गलियोंमें एक लड़का हनुमानचालीसा और विष्णुसहस्रनामकी पुस्तकें गठरीमें बांधकर बेचता फिरता था। उस दिन उसकी शक्ति थोड़ी थी, अतएव उसने छोटाही काम प्रारम्भ किया। उसने सोचा कि लाभवाले कामोंको करनेके लिए अधिक शक्ति और अधिक बलकी आवश्यकता है। फिर क्या वैसी शक्ति और बल न होनेकी दशामें चुपचाप बैठे रहना चाहिए, अथवा किसी दूसरेकी सहायतासे वैसी शक्ति और बल प्राप्त करना चाहिए। उसने इन दोनों बातोंमें से एक बातको भी पसन्द नहीं किया। उसकी समझमें यही बात आयी कि जो शक्ति है, जितना बल है, उन्हीके अनुसार कार्य प्रारम्भ करदेना चाहिए। वैसाही उसने किया। काम करना उसने प्रारम्भ करदिया। अभ्यासके द्वारा उसकी शक्तियां बढ़नेलगी और उसके अनुसार उसने अपना काम बढ़ानाभी प्रारम्भ करदिया। आज उसकी शक्ति बहुत बढ़ी हुई है, आज उसके वंशज भारतके प्रधान-ग्रन्थप्रकाशकोंमें समझे जाते हैं। उसके पास धन भी बहुत है, कई सौ मनुष्योंका गुजारा उसके द्वारा होता है। यह सब क्यों हुआ, इसीलिए कि उसने अपनी शक्तिके अनुसार कार्य प्रारम्भ किया था। इस प्रकारके एक नहीं अनेक उदाहरण पाये जाते हैं जिनसे मालुम पड़ता है छोटी छोटी शक्तियोंवाले मनुष्योंने छोटे छोटे कार्य प्रारम्भ किये, वे काम करते गये, अन्तमे उनकी वही छोटी शक्ति बड़ी होगयी, उनका वही छोटा काम बड़ा होगया। वे सफल हुए, उन्हें जिस सिद्धिकी आवश्यकता थी, वह प्राप्त हुई।

इस प्रकारके अनेक उदाहरण हैं जिनसे यह बात मालुम पड़ती है, कि छोटी छोटी शक्तिवाले मनुष्य प्रयत्नसे अपनी शक्तिको बड़ी बनाकर बड़े होगये हैं। कार्यशक्ति बढ़ती है काम करनेसे। कामका अभ्यासही उस शक्तिको बडी बनाता है। मेरी शक्ति छोटी है, मेरा बल थोडा है छोटा काम प्रारम्भ करनेसे, अप्रतिष्ठा होगी, इस प्रकारके अनर्थक विचारोंमें अपना समय व्यर्थ खोना अत्यन्त अनुचित है।

बहुत लोग समयकी प्रतीक्षा किया करते हैं। वे कहते हैं समय आवेगा आपही सब कुछ होजायगा। ऐसी वातोंका अर्थ हमलोग नही समझते हैं। ऐसा कहनेवाले दबी जबानसे भाग्यको महत्व देना चाहते हैं। वे बैठे रहसकते हैं। वे काम करना नही चाहते इसके लिए हम दुःखी होसकते हैं, पर ज़बरदस्ती उनको काम करनेमें लगा नहीं सकते। पर इससे उनको अपनी बात सच्ची न समझलेनी चाहिए, इससे उनको अपने सिद्धान्तका गव न करना चाहिए। समयकी अनुकूलतासे सिद्धि प्राप्त होती है, इस बातका कुछ अर्थ नही होता। अनुकूल समयमें कोई काम करेगा यह बात मानी नहीं जासकती। जिसका समय अनुकूल है जो सब बातोंसे भरा-पूरा है, उसको प्रयत्न करते किसीने नहीं देखा है। उसके पास सभी वस्तु वर्तमान हैं फिर वह किसके लिए प्रयत्न करे और क्यो करे। भला जानबूझकर निरर्थक परिश्रम कौन उठावेगा। समय अनुकूल है इस वाक्यका जो अर्थ होता है उससे यही बात पायीजाती है। उन्नतिके अनुयायी विद्वान् अनुकूलताको उन्नतिका सहायक नही समझते। अनुकूलतासे कार्यशक्तिका नाश होता है, फिर ऐसी दशामें सिद्धि पानेकी आशा कैसे कीजाय और यह सिद्धांत सच्चा सिद्धांत कैसे मानाजाय।

संसारका इतिहासभी हमारे अनुकूल और अनुकूलताके सिद्धांत माननेवालोंके प्रतिकूल है। भारतमें ब्राह्मणजाति किसी समय बड़ी प्रतिष्ठित थी। उस समय इस जातिमें कितनेही विद्वान् धार्मिक वीर दार्शनिक गणितज्ञ राजनीतिवेत्ता वर्तमान थे। इन लोगोंने जातिकी उन्नतिके लिए बहुत प्रयत्न किया, इन लोगोंने अपने प्रयत्नोंसे जातिके अगुआका स्थान पाया। इनकी बड़ी उन्नति हुई। समस्त देशमें इनका एकाधिपत्य होगया। बड़े बड़े राजाभी इनकी आज्ञाके बाहर एक तिल भर-भी पैर नहीं रख सकते थे। इनकी असीम शक्ति देखकर समस्त देशके मनुष्य इनका आदर करनेलगे। इतनी शक्तिके अधिकारी होकरभी इन लोगोंने राज्यके अधिकारका त्याग किया, यह इनके त्यागका प्रकाशमय उदाहरण था। इस आत्मत्यागकी ओर लोगोंका ध्यान आकृष्ट हुआ। जनसमाज इस जातिके मनुष्योंका सम्मान करनेलगा। दिनोंदिन सम्मान-की मात्रा बढ़नेलगी। उसको जहांतक बढ़ना था वहांतक बढ़ी। ब्राह्मणगणभी अब उस सम्मानके आदी होगये। जहां इनका सम्मान नहीं होता था वहां वे बिगड़ खड़े होजाते थे। इनकी शक्ति और त्यागसे लोग डरते तो थे ही। लोगोंकी धारणा थी कि इनके क्रोध करनेसे हमारा सर्वनाश होजायगा। इस कारण ये जैसा चाहते वैसाही करते। कुछ तो जनसमाज-की इच्छासे और कुछ इनके पराक्रमसे इस जातिका सम्मान बहुत अधिक बढ़गया। अब अनुकूलताकी कमी नहीं रही। संसारकी सम्पत्तियोंके अधिकारी येही समझेजाने लगे। मनुको लिखना पड़ा "सर्वस्वं ब्राह्मणस्येदं यत् किञ्चिज्जगतीगतं"। इस प्रकारकी सुविधा ब्राह्मणोंको प्राप्त हुई। इनको सब प्रकार-की अनुकूलता प्राप्त हुई। अनुकूलताके द्वारा प्राप्त होनेवाली

सामग्रियोंका ये लोग उपभोग करनेलगे। सर्वसाधारणसे लेकर राजदर्बारों तक इनका सिक्का बैठगया। खाने पीने तथा अन्य विषयोंके लिए इनकी चिन्ता दूर होगयी, इस जातिके लोगोंके दिन आनन्दसे कटने लगे। इनके इस सौभाग्यको बहुत लोगोंने सराहा, बहुतोंने ईर्षाकी दृष्टिसे देखा। फल क्या हुआ सो सुनिए। धीरे धीरे इनकी कार्यशक्ति क्षीण होती गयी, काम कोई रहा नहीं, काम करनाही ये लोग भूलगये, कार्यशक्तिके लोप होनेसे वह योग्यताभी नष्ट होगयी जो पहले थी, योग्यता-के अभावमें लोगोंका सम्मान करना कुछ कुछ घटनेलगा। अन्तमें परिणाम यह हुआ कि ये बेकाम होगये। इनकी जातीय योग्यता जाती रही। जो ब्राह्मणजाति किसी समय अपने त्याग-के लिए प्रसिद्ध थी, वही आज टकेके लिए अनेक कुत्सित कामोंको करनेके लिए खड़ी दीख पड़ती है। जिस जातिने ज्ञानप्रचारके लिए विलासको घृणाकी दृष्टिसे देखा था, आज उसी जातिके लोग रुपये लेकर गली गली पढ़ाते फिरते हैं। ब्राह्मणजातिको इस दुर्दिनका सामना क्यों करना पड़ा, आप जानते हैं, न जानते हों तो सुन लीजिए, अनुकूलता। इसी प्रकार क्या भारतीय क्या अन्य देशीय सभी जातियोंकी यही दशा हुई। अनुकूलताके कारण उनका सर्वनाश हुआ।

अतएव तुम लोग कभी अनुकूलताकी प्रतीक्षा मत करो। अनुकूलतासे कार्यशक्ति तीव्र नहीं होती। एक बात और है, क्या अनुकूलता आपही आप आजाती है या उसके लिए भी प्रयत्न करना पड़ता है। यदि कहा जाय कि विना प्रयत्न कियेही वह प्राप्त होजाती है, तो फिर उसकी प्रतीक्षाकी क्या आवश्य-कता है। तुम समझो कि हमको प्रयत्न करनेके लिए अनु-कूलता प्राप्त है। यदि कहो कि अनुकूलता प्राप्त करनेके लिए

प्रयत्नकी आवश्यकता है तो फिरभी तुमको प्रयत्न करना पड़ेगा। कहनेका तात्पर्य यह है कि ऐसी कोईभी अवस्था नहीं है, ऐसा कोईभी समय नहीं है जो प्रयत्न करनेकी आज्ञा न दे। अनुकूलता प्रतिकूलता चाहे जो हो सब दशाओंमें प्रयत्न करनेकी आवश्यकता है।

सिद्धिके लिए कार्यशक्तिके उत्तेजनकी आवश्यकता है, उस कार्यशक्तिको उत्तेजित करनेका उपाय है काममें लगजाना। काम करनेसे शक्ति बढ़ती जाती है, और अन्तमें वह मनुष्यके सामने सिद्धिको लाकर खड़ी करदेती है।

काम कई प्रकारके होते हैं। यह बात लिखी गयी है कि सब मनुष्य सब काम नहीं करसकते। तुमको काम करनेके समय अपने अधिकारकी ओरभी ध्यान देना चाहिए। राजा और समाजके द्वारा अधिकार निश्चित किये जाते हैं। तुमको उसी सीमामें रहकर काम करना चाहिए। तुमको अपने अधिकार पानेके लिए अधिकारके अनुसार फल प्राप्त करनेके लिए पूरी दृढ़तासे कामलेना चाहिए। मनुष्यके अधिकार छोटे नहीं हैं वे बहुत बड़े हैं, उनको पानेके लिए दृढ़ताकी आवश्यकता है। सम्भव है कोई कोई निर्बल समाज अपने व्यक्तियोंको थोड़ा अधिकार दे। इससे तुम समाजपर क्रोध मत करो। समाजने यदि अपनी निर्बलताके कारण अपनी व्यक्तियोंके अधिकारकी सीमा सङ्कुचित की है, तो तुमको अपनी शक्ति समाजको शक्तिशाली बनानेके लिए लगा देनी चाहिए। उस समय समाजकी निर्बलता दूर होनेपर तुम्हारे अधिकारोंकी सीमाभी बड़ी होजायगी। इसी प्रकार राजाके दिये अधिकारोंके विषयमें भी समझना चाहिए। यदि निर्बल राजा तुमको पूरा अधिकार नहीं देता तो तुम उसको बलवान् बनाओ,

उसकी शक्तियोंको बढ़ाओ। शक्तिशाली होनेपर तुम्हारा राजा तुमको बड़े अधिकार अवश्यही देदेगा।

काम करनेवालोंको, कर्मके द्वारा सिद्धि चाहनेवालोंको कभी असन्तोष नही करना चाहिए। समाज या राजा स्वार्थके वशीभूत होकर हमारे स्वार्थोंको हमारे अधिकारोंको सङ्कुचित करता है, यह कभी मत समझो। इसलिए कि यह झूठी बात है। तुम्हारी इस प्रकारकी समझ भ्रमात्मक समझी जायगी। भ्रमात्मक समझ सदा हानिकारी होती है इस बातके लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। जानते हो, राजा और समाज तुम्हारी भलाईही सदा सोचा करते हैं, तुम हो इसीसे समाज है, तुम हो इसीसे राजा है। तुम्हारा बल तुम्हारी शक्ति तुम्हारा धन समाज और राजाके गर्वके लिए होते हैं। तुम्हारी शक्ति बल और धनसेही ये शक्तिमान् बलवान् और धनवान हैं। फिर ये तुम्हारी बुराई सोचेंगे यह बात तुम कभी मत समझो। यदि इनके किसी कामका स्पष्ट अर्थ तुम्हारी समझमें न आवे तो उसके अर्थ समझनेका प्रयत्न करो। समाजसे या राजासे यदि कोई गलती होजाय तो उसको सुधारो। व्यक्तियोंसे समाज बनता है और समाजसे राष्ट्र। ऐसी दशामें आपसमें मिलकर काम करना अत्यन्त लाभकारी होगा। तुमहो इसीसे समाज है और समाज है इसीसे तुमहो, तुम समाजको बलवान बनाते हो और वह तुम्हारी रक्षा करता, राजाको तुम और समाज दोनों मिलकर बलवान बनाते हो और वह तुम्हारी दोनोंकी रक्षा करता है। ऐसी स्थितिमें जिससे ऐसा सम्बन्ध है उसके विषयमें भ्रमात्मक ज्ञान होना क्या लाभदायक हो सकता है। अतएव इस विषयमें भूलकरभी भ्रमको अपने पास नहीं आने देना चाहिए। मान लो तुमको

समाजके कुछ नियम कड़े मालुम हुए, इससे तुम समाजपर बिगड़ खड़े हुए, तुमने उसका विरोधाचरण किया और उस विरोधाचरणसे समाजको कुछ हानिभी हुई। सोचो, इसका फल क्या हुआ। हानि किसकी हुई। उसी समाजके तुमहो। समाज की निर्बलताका प्रभाव तुमपर अवश्य पड़ेगा। तुम्हारी जातीय योग्यता निर्बल होजायगी। उस समय तुम्हारी अधिकसे अधिक व्यक्तिगत योग्यतासे कुछभी लाभ न होगा। व्यक्तिगत योग्यताके सफल होनेके लिए जातीय योग्यता आवश्यक होती है इस वातको कभी मत भूलो। इसलिए तुमको चाहिए कि तुम अपने अधिकारोंका विचार करो, उन अधिकारोंको पानेके लिए दृढ़तासे प्रयत्न करो। यही सिद्धिका मार्ग है॥

त्रुटिका संशोधन और उद्योगशीलता।

यह अभिमान कोईभी अच्छा कर्मयोगी नहीं करसकता कि उससे कोई त्रुटि न हो, वह अपने काममें गलती न करे। गलतियोंका होना स्वाभाविक है। वे कई प्रकारकी होती हैं कुछ ठीक ठीक उपाय निश्चित न करनेके कारण होजाती हैं, कुछ उपायोंके ठीक ठीक उपयोग न करसकनेके कारण होती हैं, कुछ शक्तिकी दुर्बलताके कारण होती हैं, कुछ परिस्थितके कारण होती है। इसी प्रकार अनेक कारण हैं जिनसे त्रुटियां होजाती हैं, जिनके कारण मनुष्योंसे गलतियां होजाती हैं॥

त्रुटियोंका होना स्वाभाविक है, पर इससे ऐसा नही समझना चाहिए कि जो त्रुटियां होजाती हैं उनका सुधार होही नही सकता। त्रुटियां सुधारी जाती है और उनसे होने-वाली हानियोंसेभी मनुष्य बच सकता है, उनसे वह अपनी रक्षाभी करसकता है। त्रुटियोंके संशोधन अथवा उनसे बचने-का सबसे अच्छा और सरल उपाय त्रुटियोंका स्वीकार कर लेना है। आपसे किसी काममें गलती हुई, आप मानलें कि यह मेरी गलती है, बस, होगया, अब उससे आपका छुटकारा-भी हो जायगा। यह कभी सम्भव नही है कि जिसको आप गलती समझें उसको पुनः करें। अब आप उससे सदाही अलग रहेंगे। त्रुटियोंके न होनेके कारण आपकी कार्यशक्तिभी धीरे धीरे तीक्ष्ण होती जायगी।

पर सर्वसाधारणका स्वभाव इसके विपरीत देखाजाता है। लोगोंसे जब गलतियां होजाती हैं और जब उनको उनकी गलती कोई बताता है, तब वे झट बिगड़ खड़े होजाते हैं। कभी नहीं मानते कि यह मेरी गलती है। वे अपने पक्षके

समर्थन करनेके लिए उसी प्रकारके अनेक उदाहरण देते हैं। वे कहते हैं कि अमुक मनुष्यने भी तो ऐसाही किया है। गलती करनेवालोंकी कमी तो है ही नहीं उनको उदाहरणभी अनेक मिल-जाते हैं। इस प्रकार अहङ्कारके वशवर्ती होकर वे अपनी गलतियोंको समर्थन करनेके लिए जीतोड़ परिश्रम उठाते हैं। उन गलतियोंको समर्थन करनेवाले गलती न समझते हों ऐसी बात नहीं है। वे इतने मूर्ख नहीं हैं कि उनकी समझमें गलती किसको कहते हैं, यह बात नहीं आती है। वेभी समझते हैं और खूब समझते हैं। फिरभी गलतीको गलती न कहनेका कारण उनका अहङ्कार और और अधिक बुद्धिमानी है। उनकी समझ है कि गलती करना मनुष्योंके लिए लज्जा-की बात है, वे अपनेको उस श्रेणिके मनुष्य समझते हैं जिनसे गलतियां होतीही नहीं। यद्यपि उनकी ये सब बातें कल्पनाके ही अधारपर रखी हुई हैं, इन बातोंमें कुछ प्रमाण नहीं है, केवल कल्पनाही है, पर है वह दृढ़। अतएव वे उससे टससे मस नहीं होते, उसीपर अड़े रहते हैं। साथही वे अपनेको अधिक बुद्धिमानभी समझते हैं। इन सबोंकी दृष्टिसे तो मैं प्रमाणों तथा उदाहरणोंके द्वारा निर्दोष प्रमाणित होजाऊं। रही, गलतीकी बात सो उसेभी मैं सुधार लूंगा यही है अपनी गलतियोंके समर्थन करनेवालोंके हृदयकी बात ॥

दुःख है, ऐसे मनुष्योंको मानवीय स्वभाव और मानव हृदयका पूरा पूरा ज्ञान नहीं है। मनुष्योंका स्वभाव और हृदय अभ्यासका आदी होता है। अभ्यास उसे अत्यन्त प्रिय होता है। जिस बातका उसे अभ्यास होजाता है, वह उसे छोड़ना नहीं चाहता। छोड़ना चाहेभी तो छूटना कठिन होजाता है। अत-एव विद्वानोंका उपदेश है और बुद्धिमानोंका स्वभाव है कि

वे कभी बुरा अभ्यास नहीं डालते। उनसे जहांतक बनता है, बुरी बातोंकी ओर देखतेभी नही। वैसे मनुष्योंको छूते तक नही जिनके अभ्यास बुरे हैं। क्योंकि वे जानते हैं कहीं इसका प्रभाव मुझपर भी न पड़जाय। अभ्यासोंके सामने मनुष्योंको किस प्रकार सिर झुकाना पड़ता है इस बातका उन्हें पूरा पूरा अनुभव है। जो लोग अभ्यासके बलको उपेक्षा दृष्टिसे देखते हैं, अथवा अपने काल्पनिक बलके सहारे बुरे अभ्यास डालते हैं वे धोखा खाते हैं और उनके जीवनभी कटिले होजाते हैं। कुछ लोग ऐसेभी हैं जो भीतर कुछ और रहता है और ऊपर कुछ और दिखाते हैं, इसका कारण जब उनसे पूछा जाता है तब वे इसके कई कारण बतलाते हैं और बातोंसे अपनी सफाई दिखलाते हैं। उनके विषयमें कई कारणोंसे कुछ लिखना अनावश्यक है, पहला कारण तो यह है कि वे परले सिरेके मूर्ख हैं, क्योंकि वे अपनेको सबसे अधिक बुद्धिमान् और दूसरोंको मूर्ख समझते हैं। ऐसे मूर्खोंको उपदेश देना अथवा समझाना अनर्थक है। एकतो वे समझेंगे नही और दूसरे समझानेवाले-को अपना शत्रु समझकर उससे विरोधाचरण करने लगेंगे। यद्यपि उनके विरोधाचरणसे उसकी कुछभी हानि न होगी जिसके प्रति वे विरोधाचरण करेंगे, पर इससे उनकी दुर्जनता बढ़जायगी और वे बहुत शीघ्र नाशके कूपमें गिर जायंगे। दूसरा कारण है उनका स्वार्थी और पुराना पापी होना। उनके सुधारनेके लिए सिवाय राजदण्डके दूसरा उपाय नही है। जो उनको उन्हींके कर्मोंके द्वारा कभी कभी मिला करता है। इसी प्रकारके अनेक कारण हैं, जिनसे उनके विषयमें कुछ विचार करना अनावश्यक समझा गया। इस बातको आज हमही अनावश्यक नही समझते किन्तु पहलेके पण्डितोंने भी इसे

अनावश्यक वतलाया है । अच्छा, अब उनकी बातें सुनिए, जो अपनी गलतियोंको तो समझते हैं, पर स्वीकार नहीं करते, जानबूझ करभी अपनी गलतियोंको गलती नहीं मानते। उनको इस बातका अभ्यास दृढ़ होजाता है कि वह अपनी गलतियों-को न मानें, बराबर समर्थन करते जायँ, उनके इस स्वभावकी प्रसिद्धि होजाती है, अर्थात् वहुत लोग जानते हैं कि अमुक मनुष्यने इस गलतीको अच्छा कहा है । उनके मतसे यह बात बुरी नहीं, किन्तु अच्छी है, ऐसी अवस्थामें वे गलतियोंको सुधारना चाहतेभी हैं, तौभी सुधार नहीं सकते; क्योंकि गलतियोंको सुधारनेके समय अपनी बातोंके प्रतिकूल उनको आचरण करना पड़ता है, पर वे वैसा नहीं करसकते , क्योंकि उनको मालूम है कि ऐसा करनेसे लोगोंमें हमारी हँसी होगी, हँसीके अपमानसे वे डरते हैं। अब गलतियोंका सुधारना कठिन होगया । वे चाहते हैं कि मैं अपनी गलतियोंको सुधारूं, पर साहस नहीं होता । धीरे धीरे गलती करनेका अभ्यासभी दृढ़ होता जाता है, और उनको समर्थन करनेका साहसभी बढ़ता जाता है । इस प्रकार वे एक सामान्य बातको, एक साधारण गलतीको भयानक बना डालते हैं और अपने जीवन-को नष्ट करदेते हैं । जो अपनी गलतियोंको मानलेते हैं उनकी अपेक्षा गलतियोंको न माननेवालेकी हानि अधिक होती है, और अप्रतिष्ठाभी । फिरभी स्वभावके वशवर्ती,होकर लोगोंको वैसा करना पड़ता है ।

अतएव उचित और आवश्यक यह है कि ऐसी बुरी बातों-का अभ्यास डालाही न जाय, यदि असावधानीसे पड़गया हो तो उसे दूर करनेका प्रयत्न किया जाय । मनुष्योंको विवेकसे कामलेना चाहिए, यही मनुष्यत्वका परिचायक हैं । मनुष्य

अपनी उन्नति चाहता है, अपनी सिद्धि चाहता है, फिर उसको अज्ञानसे उत्पन्न अहङ्कारसे प्रेम करनेकी क्या आवश्यकता है। फिर क्यों वह व्यर्थके अहङ्कारके वशवर्ती होकर अपना नाश करता है। फिर क्यों वह कर्म मार्गको अपने परिणाम नीरस उदाहरणोंसे कण्टकित बनाता है। फिर क्यों वह कर्मयोगकी महिमाको धुंधला बनानेका निरर्थक प्रयत्न करता है।

यदि तुमसे कोई गलती होजाय साफ साफ कहदो, कि यह हमारी गलती है, क्यों उसको छिपाते हो, गलती मूर्खतासे होती है, उसको छिपाना, छिपाकर उसकी रक्षा करना मूर्खताकी रक्षा करना है। फिर तुम मूर्खतासे प्रेम क्यों करते हो, उसकी रक्षा करके उसको जीवित रखनेका प्रयत्न क्यों करते हो। क्या तुमको मूर्खतासे अधिक प्रेम है और अपनेसे नहीं, यदि अपनेसे प्रेम है तो आत्मप्रेमके लिए तुम मूर्खताका बलिदान क्यों नही करते हो। मूर्खताकी रक्षा मत करो, सदा उसको ढूढ़ते रहो जहां उसका पता लगे, लोगोंको बतलादो कि यही मूर्खताके रहनेका स्थान है। निश्चित समझो तुम्हारी मूर्खता दूर होजायगी, जानते हो क्यों, इसलिए कि वह अपनी चर्चा सुनना नहीं चाहती, चर्चासे वह डरती है, जहां जनसमाजमें उसकी चर्चा फैली, वैसेही वह तुमको छोड़कर भागजायगी; उसके भागजानेसे तुम्हारा जीवन सुखमय आनन्दमय और शुद्धकर्ममय होजायगा। अतएव साधारण त्रुटिको बड़ी मत बनाओ, मनुष्योंके स्वभावका ज्ञान प्राप्त करो, गलती करनेवालेके उदाहरणोंको मत ढूढ़ो, उनसे हानि है, तुम ऐसे उदाहरणोंको ढूढ़ो, जिन लोगोंने अपनी गलतियां हटायी हैं, जिन लोगोंने अपनी मूर्खता दूरकी है। सम्भव है गलतियोंको छिपानेवालोंमें भी तुमको कुछ ऐसे उदाहरण मिलजायं, जो

सफल समझे जातेहों, जो सिद्धिप्राप्त समझे जाते हों। उनकी ओर न देखो और न उनपर भरोसा करो। क्योंकि वे सफल हुए हैं अथवा उनको सिद्धि मिली है इसका निर्णय करना अत्यन्त कठिन है। अच्छा मानलो कि एक दो मनुष्योंको सिद्धि मिलही गयी तो क्या इसका यह अर्थ होगा कि वही मार्ग है, लोग उसीको अच्छा समझें। यदि किसीका ज्वर दही खानेसे छूटजाय तो क्या इसका यह अर्थ है कि ज्वरकी दवा दही है। यदि किसीको वनमें जानेसे कुछ रुपये मिलजायं तो क्या इससे संसारको यह उपदेश देना चाहिए, कि तुम-लोग रुपयोंकी चिन्ता मत करो. इसके लिए नौकरी क्यों ढूढ़ते हो, कारखाने क्यों खोलते हो, छोड़ो इन सब खुराफातों-को, छोड़ो शीघ्रही वनमें चले जाओ, चाहो जितना रुपया उठा-लाओ। क्या ये बातें किसी समझदारकी समझमें आसकती हैं। बात यह है कि गलतीसे सफलता होती है, यह बात बिल कुल नयी है, खुद गलती करनेवालेभी इस बातको नहीं मानते। अतएव मैं कहता हूं कि उन उदाहरणोंको मत ढूढ़ो। जब तुम अपनी गलतीको गलती मानने लगोगे, उस समय यदि तुमसे कोई बड़ा भारीभी अपराध होजायगा, उस समय तुम्हारा स्वामीभी उस अपराधके लिए तुमपर क्रोध नहीं करेगा, किन्तु तुम्हारे दुःखसे वह दुःखी होगा और तुमको सहायता पहुंचा-वेगा। क्योंकि उसका हृदय तुम्हारी सत्यवादिता और सरलतासे तुम्हारे अधीन होजायगा। वह तुम्हारा साथी हो-जायगा। उस समय वह अपनी हानिको भूल जायगा। यही मानव स्वभाव है। अतएव तुमको अपनी गलतियोंको स्वीकार करनेमें कभी देरी नहीं करनी चाहिए। ऐसा करनेसे जो तुमको हानियां उठानी पड़ेंगी, उनका कुछ कुछ परिचय दिया

गया है, जिससे तुमलोग सावधान हो सकते हो और लाभ उठा सकते हो॥

यह वात तो तुमलोगोंको मालूमही है कि मनुष्यसे गलतियोंका होना कुछ नयी वात नहीं है, मनुष्यसे गलतियां होती हैं और एकवार नहीं अनेक वार। कतिपय मनुष्य इस वातसे ऊव जाते हैं अतएव वे काम करनाही छोड़ वैठते हैं। वे कहते हैं कि हमसे काम नहीं होसकता. यदि करूंभी तो लाभ नहीं होसकता, क्योंकि मुझसे वार वार गलतियां होती हैं। गलतियोंके मारे मैं सिद्धिप्राप्त नहीं करसकता। पहले जिस स्वभावके मनुष्योंका वर्णन हुआ है उनसे इनका स्वभाव भिन्न है। ये गलतियोंका होना स्वीकार करते हैं, ये यहभी मानते हैं कि मनुष्योंसेही गलतियां होती हैं, पर ये उनसे डरते हैं, ये कहते हैं कि गलतियोंके मारे मुझसे कुछ करते धरते नहीं वनता है। गलतियां इनके लिए हथकड़ी वेड़ीका काम करती हैं। इसीसे इनके समस्त उद्योग धूलमे मिलजाते हैं, ये निकम्मे होकर वैठ जाते हैं। इस स्वभावके मनुष्यभी पूरी तो नहीं पर आधी ग़लती अवश्य करते हैं। पूरी नहीं इसलिए कि वे अपनी गलतियां मानलेते हैं, और आधी इसलिए कि उनसे डरकर काम करनाही छोड़ वैठते हैं। ये कहते हैं कि भाई जव काम सिद्ध होनेपर आता है तव एक न एक त्रुटि होज़ाती है, जव ऐसी वात है, जव त्रुटियोंका होना स्वाभाविक है तव सिद्धि प्राप्त करनेकी सम्भावना कैसे कीजाय। फिर जव सिद्धि नहीं मिलेगी तव अनर्थक प्रयत्न क्यों कियाजाय। अव हम लोगोंको इस वातपर विचार करना चाहिए कि इन लोगोंकी समझ कैसी है, क्या वह उचित है या अनुचित। यदि उचित है तवतो कोई वातही नहीं और अनुचित है तव हम लोगोंको

चाहिए कि हम उनको समझावें और बतलावें कि आपकी यह बात अच्छी नहीं है इसे आप छोड़िए। वे कहते हैं कि हम सफल नहीं होते इसलिए काम करना छोड़ते हैं। यह ठीक है। उनकी इस बातका साधारण अर्थ यही न हुआ कि वे सफलता चाहते हैं, सफलता पानेके लिए वे जिन उपायोंका अवलम्बन करते हैं उनमें कुछ त्रुटियां होजाती हैं, जिससे कि वे सफल होने नहीं पाते। इसलिए वे हताश होगये हैं और हताश होकरही काम करना छोड़ना चाहते हैं। उनका साधारण यही अभिप्राय होता है। अभिप्राय ठीक है, पर हमको दुःख है कि उन सज्जनोंने अपने अभिप्रायके अनुसार काम नहीं किया। उनकी कार्यप्रणाली विलक्षण है। वे इस समय दु:खमें हैं नहीं तो इस बातको देखकर लोग हँसते, बात है भी हँसीकी। इस विषयमें मैं एक बात कहना चाहता हूं। मान लीजिए एक आदमीको भूख लगी है, उसके लिए भोजन बनाया गया। वह भोजन करनेके लिए बैठा, उसने भोजन करना प्रारम्भही किया था कि उसके भोजनमें बिस्तुया गिर-पड़ी, अब उसको भोजन छोड़कर उठजाना पड़ा। इसी प्रकार-की कई घटनाएँ हुईं जिनसे वह भोजन न करसका। अब उसने प्रतिज्ञा करली कि हम भोजनही नहीं करेंगे, क्योंकि विघ्न बहुत हैं, उनके कारण भोजन करने तो पाताही नहीं हूं। फिर व्यर्थका भोजन क्यों करूं। अब आपलोग बतलाइए उस सज्जनकी यह प्रतिज्ञा अच्छी समझी जायगी, क्या कोई भला आदमी उस सज्जनको विना पागल कहे रहसकता है। उसको देखकर लोग कहेंगे, भला आदमी, दो तीन बार या इससे अधिक बार तुम्हारे भोजनमें विघ्न हुए हैं, इससे क्या सदा विघ्नही होता रहेगा यह तुमने कैसे जानलिया। यदि तुमको

इसका निश्चय है, यदि तुम जानतेहो कि विघ्न अवश्य होंगे, तो क्या भोजन त्यागदेनाही इसका उपाय है, भोजन त्याग देनेसे विघ्न न होंगे यह बात ठीक है, पर भोजनके अभावमें प्राण चले जायंगे इसका क्या उत्तर है। क्या विना भोजन किये प्राण रहसकते हैं। तुमको अपने लाभ और हानिकी वात सोचनी चाहिए। भोजन प्रिय है इसमें सन्देह नहीं, पर विघ्न वीचमें आते हैं और तुमको भोजन करने नहीं देते, तो इसमें भोजनका क्या अपराध है जो तुम उसका त्याग करते हो। शरीरमें रोग होते हैं, फोड़े फुन्सियां होती हैं इसलिए क्या शरीर छोड़देना चाहिए, और क्या शरीर छोड़देनेवाला वुद्धिमान कहा जासकता है। यदि तुम्हारे शरीरमें फोड़े फुन्सियां होती हैं तो ऐसा उपाय करो जिससे वे न होने पावें, विघ्नोंके कारण भोजन न छोड़ो, ऐसा उपाय करो ऐसा प्रयत्न करो जिससे विघ्न होने न पावे। विघ्न तुम्हारे शत्रु हैं जो तुम्हारे अधिकारोंको तुमसे छीनते हैं, क्या तुम भीरु हो, क्या डरपोक हो जो शत्रुओंके भयसे अपना अधिकार छोड़दोगे। यह लज्जाकी वात होगी तुम्हारे लिए तुम्हारे देशके लिए यदि तुम विघ्नोंके भयसे अपना अधिकार छोड़दोगे। लोग तुमको डरपोक कहेंगे, भले आदमी तुमसे घृणा करेंगे। वतलाओ, क्या तुमको ये वातें प्रिय है, क्या तुमको अपनी इतनी दुर्दशा अच्छी मालूम होती है।

ठीक यही दशा उन लोगोंकीभी है जो गलतियोंके भयसे सिद्धि पानेके लिए प्रयत्न करना छोड़देते हैं। कोई कारण नहीं है कि तुम गलतियोंसे डरो। इस विषयमें एक वात सदा स्मरण रखनी चाहिए। तुम्हारे प्रयत्नोंमें गलतियां तभी तक हैं, तुम्हारे मार्गमें वाधा तभी आती है जवतक तुमको

ठीक मार्ग नहीं मिला है। गलतियां तुमको सावधान करती हैं ठीक मार्गपर आनेके लिए। तुमने कोई काम प्रारम्भ किया है, उसमें लगातार विघ्न होतेजाते हैं, इससे तुमको समझना चाहिए हम ठीक मार्गपर नहीं जारहे हैं। विघ्नों तथा त्रुटियोंसे सावधान होकर लाभ उठाना चाहिए। ऐसी स्थिति-में यदि तुम काम करनाही छोड़ दो तो बतलाओ तुम कितनी अपनी हानि करोगे। इसलिए अपनी गलतियोंको स्वीकार न करना जितना हानिकारी है उनसे डरनाभी उतनाही हानि-कारी है।

यह बात पहले बतलायी गयी है कि अपने अधिकारोंको पानेके लिए दृढ़तासे कामलेना चाहिए। अपने अधिकारोंको छोडना कायरता है। नो क्यों, साधारण नही तो बड़ेही विघ्नों-के भयसे तुम क्यों डरते हो और इतना क्यो डरते हो कि जो वस्तु न्यायसे प्राप्य है उसको भी छोड़देते हो।

विघ्नबाधाओंको जीननेका सबसे प्रधान उपाय है उद्योग-शीलता। काममें लगेरहो, प्रतिदिन कुछ न कुछ करते जाओ, तुम्हारी गलतियोंसे जो विघ्न उपस्थित होनेवाले होंगे वे नही होसकेंगे। अपने करनेके लिए जो काम तुमने चुना है, प्रति-दिन उसका कुछ न कुछ अनुष्ठान करतेजाओ। यदि विघ्नोंका तुम्हें भय है तो थोड़ाही सही, पर काम करो अवश्य। प्रतिदिन नियमपूर्वक काम करनेकी महिमा तुमको मालुम नहीं है। तुमको यह बात सदा ध्यानमें रखनो चाहिए कि नियमित छोटे छोटे प्रयत्नोंसे भी बड़े बड़े काम सिद्ध होते हैं। प्रतिदिन नियमपूर्वक काम करते जाओ शीघ्रही इसका फल मालुम पडेगा। यदि तुम्हारे कार्योंमें विघ्न आते हैं तो खूब विचारो और सोचो ध्यानपूर्वक देखो कि तुम्हारे काम करनेके ढंगमें

कोई गलती तो नहीं हुई है। तुमने अपने लिए जो सिद्धि नियत की है, उसके लिए जो मार्ग है, जिन उपायोंसे वह सिद्धि प्राप्त होती है, उसी मार्गपर तुम जारहे हो या नहीं, उन्हीं उपायोंका तुमने अवलम्बन किया है, या नही इन बातोंको खूब ध्यानसे देखो. प्राचीन उदाहरणों तथा इसी प्रकारके अन्य उदाहरणोंके द्वारा असली बातका पता लगाओ, पर अपना उद्योग बन्द न करो उसको जारी रखो, प्रतिदिन कुछ न कुछ करते जाओ। उद्योग छोड़देनेसे तुमको अपने कार्यकी त्रुटियें और विघ्नोंका कभी ज्ञान नहीं होसकता। जो मनुष्य सदा कार्यमें लगारहता है, वही धनवान् विद्वान् यशस्वी और सफल होता है, विघ्नोंको जीतनेका इससे बड़ा कोई उपाय नहीं है। बहुत कुछ सम्भव है कि प्रतिदिन नियमपूर्वक काम करनेवालोंके मार्गमें विघ्न आवेही नहीं। अतएव नियमसे विचारपूर्वक काम करो। त्रुटियोंसे विघ्न आते हैं, त्रुटियां होती हैं मूर्खतासे आलस्यसे और उचित मार्गका अवलम्बन न करनेसे। अतएव तुमको इन बातोंपर अवश्य ध्यान रखना चाहिए।

कुछ लोग ऐसे हैं जो कार्य प्रारम्भ करदेते है, सोचते विचारते कुछभी नहीं। थोड़े दिनोंतक कामभी करते हैं, पर जब देखते हैं कि कुछ फल नही हुआ, सिद्धि नहीं मिली उस समय व्याकुल होकर काम करना छोड़देते हैं. वे हताश होकर वैराग्यका प्रचार करने लगजाते हैं अर्थात् अपनी मूर्खतासे वे स्वयं नष्ट तो होतेही हैं साथही दूसरोंको भी नष्ट करनेका प्रयत्न करते हैं। मूर्ख और आलसी उनकी बातें मानने लगते हैं। मूर्खोंको तो बुद्धि नही और आलसी चाहतेही हैं कि हमको कोई न कोई एक बहाना मिलजाय जिससे काम करना न

पड़े। ऐसी स्थितिमें संसारके कामोंमें असफल मनुष्योंका वैराग्यवाद चल निकलता है। इस वैराग्यवादसे बड़ी हानि हुई है, नास्तिकताका प्रचार हुआ है, और मनुष्यत्वके सर्व-नाशका सूत्रपात हुआ है। जब तुमको इस प्रकारके कोई सज्जन मिलें उस समय तुमको बड़ी सावधानीसे कामलेना चाहिए। वैराग्यवादका जादू तुमपर असर करने न पावे इसके लिए तुमको प्रयत्न करना चाहिए। उस जादूसे बचनेके लिए किसी कठिन प्रयत्नकी आवश्यकता नही है। जब तुमको कोई इस प्रकारका उपदेश देनेवाला मिले, उस समय सबसे पहले तुम उसकी स्थितिका ज्ञान प्राप्त करो और उससे पूछकर उसके पूर्व इतिहासका वृत्तान्त जानो। इन्ही बातोंसे तुमको उसके उपदेशका महत्त्व मालूम होजायगा। तुम समझ जाओगे कि यह वैराग्यवादका उपदेश देकर संसारमें नास्तिकताका प्रचार करना चाहता है, मनुष्योंके स्वाभाविक प्रवाह इसलिए रोकना चाहता है कि यह स्वयं उसमें असफल हुआ है। बस, इन बातोंके समझ लेनेपर तुमको जादू अपने वशमें नहीं कर-सकता। तुमको देखनेसे आपही मालुम होजायगा कि वैराग्य-वादके उपदेशकोंमें अधिकांश मूर्ख होते हैं यह बात उनके विचारोंसे साफ़ साफ़ मालुम होजाती हैं। वे असफलताके बड़े कारण बतलावेंगे। बड़े बड़े विघ्नबाधाओंका भय दिखावेंगे, उनका व्याख्यान बडा जोशीला होता है, उस समय यदि थोड़ी सावधानीसे काम न लियाजाय तो बातकी बातमें सभी काम मिट्टीमें मिल जायँगे। अतएव वैसे मनुष्योंका उद्देश्य बड़ी सावधानीसे समझना चाहिए। उस समय थोड़ीभी गलती जहां हुई समझो सर्वनाश होनेमें कुछभी देर न लगेगी। जो तुमको वैराग्यका उपदेश दे उसकी ओर बड़ी तीखी निगाहसे

तुमको देखना चाहिए, वह तुम्हारे कल्याणके लिए क्यों उद्यत हुआ है इस बातका पता लगाना चाहिए। जब तुम सावधानीसे इन बातोंपर विचार करने लगोगे उस समय अनायासही तुम ऐसे वैराग्योपदेशकोंके फन्देसे छुटकारा पाजाओगे।

इस प्रकारके वैराग्योपदेशकोंको भी तुम अपने कार्यके लिए अपने सिद्धि पानेके लिए एक प्रकारका विघ्नही समझो, इनके उपदेश जिस दिन तुम्हारे ऊपर असर करजायंगे अवश्यही वह दिन तुम्हारे लिए बडा बुरा दिन होगा, निश्चित समझो उसी दिनसे तुम्हारे सर्वनाशका प्रारम्भ होगा; क्योंकि तुमभी काम करना छोड़ दोगे। एककी एक मूर्खताके अनुभवसे तुमको भी हानि उठानी पड़ेगी।

उद्योग निष्फल होता है यह कभी मत समझो, जो लोग भाग्यके भरोसे उद्योगका सफल होना समझते हैं और तुमको भी अपनी बातोंपर विश्वास करनेके लिए बाधित करते हैं, उनसे अलग रहो, वे अंधे हैं और तुमकोभी अन्धा बनाना चाहते है। भाग्यसे और उद्योगसे कोई संबन्ध नही है। इस विषयमें पहले कुछ लिखा जाचुका है। अब इस विषयमें यहा और कुछ नही लिखा जायगा। हम यहां इस विषयमें कुछ लिखना नही चाहते। हम तुम लोगोंके भाग्यवादको थोड़ी देरके लिए मानलेते हैं, पर एक बात हम तुम लोगोंसे अवश्य पूछेंगे, क्या संसारमें तुम लोगोंने ऐसा एकभी उदाहरण देखा है जिससे यह साबित हो कि उद्योगके विनाभी भाग्यसे सफलता मिलती है। मैं कहता हूं, और बड़े विश्वासके साथ कहता हूं कि ऐसा उदाहरण तुमको संसारमें नहीं मिलेगा। भाग्यवादियोंका भाग्यभी उद्योगका साथी है, वह सदा उद्योगके " रहाकरता है। उद्योगीका भाग्य सदा उसके अधीन और

अनुकूल रहाकरता है। छोटेसे छोटे कामोंसे लेकर बड़े बड़े कामों तक उद्योगसेही सिद्ध होते हैं, सावधानी चित्तकी एकाग्रता और आग्रहपूर्वक निरन्तर कामोंमें लगे रहनेसे ऐसा कोईभी काम नही है जो सिद्ध न हो। आवश्यकता नहीं है कि तुम अपने कामकी सिद्धिके लिए किसी महात्मा को दुःखदो, उनसे आशीर्वाद माँगते फिरो, अपने कामोंके लिए देवताकी सहायताकी भी आवश्यकता नही है, आवश्यकता है दृढ़ होकर सदा तुम्हारे उद्योग करनेकी। देवतासे आशीर्वाद पाना बड़ाही कठिन है और शीघ्रही देवतासे प्रार्थना करनेके योग्य तुम होजाओगे इसकाभी विश्वास नही है। जिन देवताओंको प्रसन्न करनेके लिए प्राचीन भारतवासियोंको कितने कष्ट उठाने पड़ते थे, उनको इस कलियुगमें शीघ्रही तुम प्रसन्न करलोगे इस बात-पर विश्वास कैसे कियाजाय। अतएव वह मार्ग कठिन है। तुम जब अपने उद्योगहीसे सिद्धि प्राप्त करसकतेहो और सोभी शीघ्र, तो क्या आवश्यकता है, इस एक छोटेसे कामके लिए देवताओंको कष्टदो। देवताओंको प्रसन्न करना चाहते हो प्रसन्न करो पारलौकिक कल्याणके लिए और लौकिक कल्याणके लिए अपनी बुद्धि बल शक्ति दृढ़ता और उद्योग आदिसे कामलो। एक बात है, देवताको तुमने प्रसन्न किया और वे तुमपर प्रसन्न होगये तो इससे क्या हुआ। स्वयं देवता आकर तो तुम्हारे काम करही नहीं देंगे। वेभी प्रसन्न होंगे तो केवल इतनाही करेंगे कि तुम्हारी मूर्खता दूर करेंगे तुमको विवेक देंगे। यह काम तो शास्त्राध्ययनसे भी होसकता है। उदाहरणोंको सामने रखकर उनपर विचार करनेसे भी होसकता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि तुम सदा जो कार्य प्रारम्भ करो, उसका कारण क्या है, किन उपादानोंसे

वह कार्य सिद्ध होता है यह बात अवश्य जानलो। ऐसा कभी मत होनेदो कि तुमको कार्य तो कुछ और करना है और उस कार्यके लिए जो कारण जो उपादान तुमने एकत्रित किये हैं वे दूसरे कार्योंके लिए हों, उनसे दूसरे कार्य सिद्ध होते हों। इन बातोंको सदा ध्यानमें रखो। इन बातोंको उपेक्षाकी दृष्टिसे कभी मत देखो। वेही संसारमें माननीय हुए हैं जिन लोगोंने इन बातोंको आदरकी दृष्टिसे देखा है। वे महात्मा हुए हैं, उनका यश आजभी संसारमें गाया जाता है और वह दुनियाके लोगोंको कर्तव्य परायण बनाता है। उन धूर्तोंके फन्देमें कभी न फँसो, जो चालीस दिनतक रातको ११ ग्यारहबजे मन्त्र जपनेसे योगिनीका सिद्ध होने और उनके द्वारा अन्य मनोरथोंके सिद्ध होनेका उपदेश देते है, वे ऐसी ऐसी बातें कहकर तुमको ललचाते हैं, यह बात तुमको कभी नहीं भूलनी चाहिए कि प्रत्येक कार्यके लिए अलग अलग कारण होते हैं। संसारकी सिद्धियां योगिनियोंसे नहीं मिलती हैं। वे मिलती हैं सदा उद्योग करनेसे। उपदेशकजी तुमको बतलावेंगे कि देखो मैंने योगिनी सिद्धिकी है। पर असली बात यह नहीं है। वे योगिनी सिद्धिका लोभ दिखाकर कुछ मूर्खोंको ठगते हैं उनसे टके वसूल करते हैं. और मौज उड़ाते हैं, तुमको चाहिए कि तुम उनसे सदा सावधान रहो, देखा है न, इस प्रकारके उपदेशकोंकी भेट जब किसी बुद्धिमानसे होजाती है उस समय अदालतमें उन्हें जाना पड़ता है और वहांसे सुविवेचक तथा बुद्धिमान् न्यायाधीशसे वे उचित और अपने कर्मोंके अनुरूप दक्षिणाभी पाते हैं। अतएव वैसे आदमियोंसे सावधान होनेकी बड़ी जरूरत है।

तुम लोग कहोगे कि देवता मनुष्योंकी अपेक्षा अधिकशक्तिमान् होते हैं, उनकी प्रसन्नता और उनकी सहायता लेना

मनुष्योंको आवश्यक है । तुम लोगोंकी इस वातको मैंभी मानता हूं। पर थोड़ासा भेद है। तुमलोग कहते हो देवताओं-की प्रसन्नता और सहायता लेनेके लिए उनके यहां चलो, उनसे प्रार्थना करो। मैं कहता हूं कोई जरूरत नहीं, क्योंकि वह मिल चुकी हैं। केवल देवप्रसाद और देवसहायही तुमको नहीं मिला है, किन्तु ईश्वरप्रसाद और ईश्वरसहायता भी मिली है। क्या तुम अपनी वुद्धिको भूलगये हो, तुम अपनी वुद्धिको थोड़े परिश्रमसे विकसित करसकते हो, इस वातको भूलगये हो । ईश्वरने कृपाकर तुमको प्रसादरूपमें वुद्धि दी है, उसको विकसित करनेका उपाय वताकर, तुम्हारी सहायताकी है। जिन देवताओंकी सहायता और प्रसन्नता पानेके लिए तुम व्याकुल हुए हो, वे तुम्हारे साथ हैं, इस वातको मत भूलो। नास्तिक मत वनो। क्या तुमको मालूम नही है कि चौदहों इन्द्रियोंके अधिष्ठाता चौदह देवता हैं । भला जिस मनुष्य जातिके हाथोंके रक्षक देवता इन्द्र हैं, पैरोंके रक्षक विष्णु हैं, कानोंके दिशाएँ, आँखोंके सूर्य, जीभके वरुण, नाकके अश्विनी-कुमार, वचनके अग्नि, मनके चन्द्रमा, वुद्धिके ब्रह्मा, अहङ्कारके शङ्कर, उस मनुष्य जातिको पुनः क्या आवश्यकता है कि सहायताके लिए देवताओंको कष्टदे। तुम अपने शास्त्रों-पर विश्वास करो, इन अनर्थक वकवाद करनेवाले मतलवसे वोलनेवाले उपदेशकोंकी वात मत मानो । ये तुमको अपनी खेती वनाए हुए हैं। तुम्हें ईश्वरका और देवताओंका प्रसाद मिला है, उनकी सहायता तुमको मिली है । तुम विश्वास मत करो, प्रत्यक्ष देखो, यदि किसीकी वात माननेकी आवश्य-कता हो तो उसकी वात मानो जो प्रमाणिक हो। यदि तुमको किसीके उपदेश सुननेकी आवश्यकता आपड़े, तो पहले देखलो

कि तुम्हारा उपदेशक किसी नशेमें चूर तो नही है उसकी बातें शास्त्रकी बातोंसे, बड़े बड़े महात्माओंके चरित्रोंसे विरुद्ध तो नही हैं। यहभी देखो कि यह अपने किसी स्वार्थके लिए तुम्हारी खुशामद तो नहीं कररहा है, क्या यह मुझे प्रसन्न करनेका प्रयत्न करता है। इसके अतिरिक्त यहभी देखो कि वह कौन है। वह स्वयं कर्मयोगी है कि नहीं। उसको शास्त्रका ज्ञान है कि नही। आजकलका समय बड़ा टेढ़ा है, यदि तुम इन बातोंपर अच्छी तरह विचार नहीं करोगे तो धोखा अवश्य खाओगे। आजकल जूआ खेलनेवाले और इसी तरहके और बहुतसे काम करनेवाले सज्जन समझे जाते हैं, वे धर्मका उपदेश करते हैं। जनसमाजके वे पथप्रदर्शक समझे जाते हैं। कोई जरूरत नही कि तुम उनका विरोध करो। क्योंकि किसीका विरोध करना किसीका कर्तव्य नही होसकता। तुम उनको समझ लो और समझकर बचजाओ, इसीमें तुम्हारा कल्याण है, यदि तुमने इतना करलिया तो समझलो अपने कल्याणका मार्ग तुमने समझलिया॥

सदा इन बाधाविघ्नोंसे बचो और उद्योगमें लगजाओ। सदा उद्योग करनेवालोंने संसारमें क्या क्या करदिया है, इस बातकी ओर ध्यान दो। नवतनु (न्यूटन) का नाम सबलोग जानते हैं। वह ससारके उन मनुष्योंमेंसे था जिनके कारण आज संसार प्रतिष्ठित और ज्ञानी समझाजाता है। यदि वह भारतवर्षमें उत्पन्न हुआ होता तो उसको अवश्य महर्षिकी पदवी मिलती और वह वर्षके किसी एकदिन अवश्य पूजाजाता। उससे एकबार किसी सज्जनने पूछा कि आपके ये विलक्षण संसारको चकित तथा संसारको अज्ञानान्धकारसे रक्षा करनेवाले सिद्धांत किस तपस्याके फल है, आपने

किन उपायोंसे ये नये नये आविष्कार किये हैं। उसने उत्तर दिया, तत्परता। उसने कहा मैं जिस किसी विषयपर विचार करना चाहता हूं उसको लेकर किसी एकान्त स्थानमें बैठजाता हूं और सदा उसीपर विचार किया करता हूं। एक क्षणके लिएभी उस बातको मैं अपने मनसे अलग नहीं होने देता। जबतक उस बातका तत्व मेरी समझमें नही आता, जबतक उस विषयका प्रकाश मेरे हृदयमें नहीं होता, जबतक फल उत्पन्न होनेके चिन्ह मैं नही देखता जबतक सूर्यके सुन्दर दर्शन नहीं होते, तबतक मैं उस बातको नहीं छोडता, चाहे कितनेही दिन व्यतीत क्यों न हो जांय। इसी प्रकारके और अनेक महापुरुष इस बातपर विश्वास करते हैं कि मनुष्य जो कुछ करता है, वह अपने प्रबल उद्योगके द्वाराही करता है। एक साधारण उदाहरणकी ओर देखो। मधु मक्खीको तुम लोगोंमेंसे बहुतोंने देखा होगा, बहुतोंने उनकी बनायी मधु खायी होगी। मधुमक्खी एक अत्यन्त निर्बल असहाय अचेतन प्राणी है। पर वह मधुके समान मीठी और अनेक रोगोंको दूर करनेवाली वस्तु बनाती है। न तो उनमें बल है और न बुद्धि। यदि कुछ है तो केवल सदा प्रयत्न करते रहनेका अभ्यास। वे सदा प्रयत्न करती रहती हैं, इससे मधुके समान स्वादिष्ट पदार्थ बना सकती है। यदि बलवान् और बुद्धिमान् सदा प्रयत्न करनेमें लगा रहे तो उसको कितना फल मिले, वह संसारके उपकारके लिए कैसा उत्तम पदार्थ बनावे, इसका निश्चय क्या तुम नहीं करसकते॥

उत्साहपूर्वक उद्योग करो, जिसदिन उत्साहपूर्वक उद्योग करनेका अभ्यास तुमको होजायगा उसी दिनसे तुम्हारा हृदय भी धीरे धीरे बलवान् होता जायगा, वह धीरता पूर्वक काम-

करना सीखेगा। धीरतापूर्वक अपने किये हुए कामोंके फलकी प्रतीक्षा करनेका महत्व समझेगा। मत हटो अपने उद्देश्यको सिद्ध करनेसे, तुमने अपना उद्देश्य तो पहलेसे निश्चित करही लिया है, दृढ़तापूर्वक उसीको सिद्ध करनेमें लगेरहो। यही तुम्हारा व्रत यही तुम्हारा पवित्र कर्तव्य होना चाहिए, उद्देश्यका साधन करनाही तुम्हारा धर्म है, धर्मको मत छोड़ो उससे पीछे मत हटो। यदि तुमने धर्मका त्याग किया, यदि तुमने अपने पवित्र कर्तव्यका तिरस्कार किया तो तुमको अपने मनुष्य होनेमें सन्देह करना चाहिए। मनुष्य कर्त्तव्य परायण होते हैं, धार्मिक होते हैं, वे कर्तव्य और धर्मके पालनकी महिमा खूब जानते हैं। वे समझते हैं कि हमारा महत्व मनुष्यत्व आदि सभी कुछ कर्तव्य पालनपर निर्भर है। अतएव पर्वतके समान अविचल होकर अपने कर्तव्यपालनके लिए सदा उद्योग करते रहते हैं, वे नदीकी धाराके समान बड़े वेगसे अपने उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ते है, वे सूर्यके समान तेजस्वी हैं अतएव वाधाविघ्नोंको दूरकर अपना कार्य सिद्ध करते हैं, वे चन्द्रमाके समान कोमल और सौम्य हैं, अतएव लोग उनको बड़े आदर और स्नेहसे देखते हैं, वे कर्तव्यसाधन करते हैं यह देखकर समाजके दूसरे सज्जनभी प्रसन्न होते हैं। वे मेघ हैं, संसारमें कर्तव्यपालनरूपी जल वरसाते हैं, जिससे लोगोंका उपकार होता है, लोगभी उनसे कर्तव्यपालनकी शिक्षा पाते हैं, लोगोंकोभी अपनी अपनी शक्तियोंको उत्तेजित करने तथा उनको काममे लगानेका अवसर मिलता है। अतएव तुम दृढ़तापूर्वक उद्योग करते रहनेका अभ्यास करो, वाधाविघ्नोंको दूर करदो, सिद्धि मिलेगी॥

द्वितीय अध्याय।

सच्चरित्रता।

सच्चरित्रता मनुष्योंका प्रधान गुण है। इससे मनुष्य अपने गुणोंको विकसित करसकता है, जो मनुष्य सच्चरित्र होता है वह अपने गुणोंको अपनी बुद्धिको और अपनी कार्य-शक्तिको उत्तेजित करसकता है। सच्चरित्रतासे मनुष्य मनुष्य-समाज तथा देश अपना अभ्युदय करसकता है, वह मनुष्योंको वलवान तथा प्रभावशाली वनाता है, वह मनुष्य स्वयं नैतिक वलसे वलवान तो होता है साथही उसके उदाहरणसे दूसरेभी नैतिक वल पानेके लिए उद्योग करना प्रारम्भ करते हैं। सच्चरित्रता एक मुकुट है जो मनुष्य इसका धारण करता है, उसके सामने वड़ेसे वड़े मनुष्योंकाभी मस्तक झुकजाता है। यह एक मणि है, जिसकी प्रभासे कितनेही दुराचारी सुधर-जाते हैं, कितनोंहीका विगड़ा हुआ जीवन वातकी वातमें देखते देखतेही सुधरजाता है। यह वशीकरण मन्त्र है, इसके सामने जालिमको भी नवजाना पड़ता है। सच्चरित्रता मनुष्योंकी सव प्रकारकी उन्नतियोंका मूल है।

यह मत समझो कि सच्चरित्रता किसी खास मनुष्यजाति या देशके वांटे पड़ी है। इसके लिए किसी जाति पाँति या देशमें जन्म लेनेकी आवश्यकता नही है। सच्चरित्रता दम्भसे प्रेम नहीं करती, इसको ढोंग पसन्द नहीं है, यह किसी कृत-विद्यको भी नहीं परखती। किन्तु वह शुद्ध हृदयकी सहचरी है, जिनके मनमें खुराफात नहीं है, जिनका मन अपने वशमें है वेही

सच्चरित्र होसकते हैं। यह है कुलीनताका प्रधान चिन्ह, यह है मनुष्यताका लक्षण और मानव सिद्धिका प्रधान साधन।

मनुष्य जातिके लिए यह एक बड़ी सम्पत्ति है। यदि तुम सच्चरित्र होतो राजमुकुट और राजसिंहासनके लिए तुमको तरसना न चाहिए, उसके लिए तुमको व्याकुल न होना चाहिए, क्योंकि उनसे बड़ी सम्पत्ति तुम्हारे पास है। यदि तुम सच्चरित्र होतो तुम अपनेको किसीभी पदवी धारीसे छोटा मत समझो। क्योंकि तुम्हारे पास समस्त सम्पत्तियोंका समस्त पदवियोंका मूलमन्त्र वर्तमान है। तुम्हारी सच्चरित्रता देख-कर लोग तुम्हारी ओर खिंचे आवेंगे, वे तुमको आदरकी दृष्टि-से देखेगे, उनका आदरकी दृष्टिसे देखना तुम्हारे लिए बड़ी अच्छी बात है। वह तुम्हारे लिए एक जागीरसे भी बढ़कर काम करेगी। यदि तुम सच्चरित्र हो तो चाहे जहां रहो, चाहे जैसी हालतमें रहो, तुम्हारे लिए अपनी उन्नति करलेना कोई कठिन बात नहीं है। सच्चरित्र मनुष्यकी स्थिति यदि अच्छी न हो यदि वह सांसारिक झगडोंसे दुःख पारहा हो तौ भी वह शीघ्रही अपने दुःखोंसे छुटकारा पाजायगा। उसकी उन्नति होगी अभ्युदय होगा। जो देश अपने दुष्कर्मों अपनी मूर्खता और आलस्यके कारण अवनत हुआ है, दुःख पारहा है, वहभी यदि अपनेको सच्चरित्र बनावे तो निःसन्देह वह देश अपने दुःखोंको दूर करसकेगा।

धनसे सच्चरित्रता बड़ी है, सच्चरित्र मनुष्य अपनी सच्चरित्रतासे धनी होसकता है, पर धनी धनके द्वारा सच्चरित्र हो नहीं सकता। धन आता है और चलाजाता है, प्रयत्न करनेपर फिरभी चला आता है, पर एकबार की गयी हुई सच्चरित्रताका लौटना कठिन होजाता है। अतएव धनकी

अपेक्षाभी अधिक सावधानीसे सच्चरित्रताकी रक्षा करनी चाहिए।

इस संसारमें कुछ ऐसे मनुष्य होते हैं जो सदा दूसरोंकी उन्नति देखकर जला करते हैं। वह तरह तरहके प्रयत्नोंसे उस भले आदमीको नीचा दिखानेके लिए उद्योग किया करते हैं। उनके प्रहारोंको रोकना कठिन है, क्योंकि वे दुष्ट हैं, दुर्जन हैं, उनकी दुर्जनताका उत्तर देना और उत्तर न देना दोनों भयानक है। उत्तर न दियाजाय तौभी सङ्कट, और उत्तर दियाजाय तो अपनी शक्ति उत्तर देनेमेंही क्षीण होजायगी, काम कैसे होगा और उन्नति कैसे होगी, सब प्रकारसे उनसे भिड़नेमें हानिही है। इसका परिणाम इतना भयानक होता है कि जहां दुर्जन रहते हैं वहांके और आस पासके मनुष्य अपनी उन्नति नहीं करने पाते। किसीको मित्र बनकर किसीको शत्रु बनकर किसी-को छिपकर इस प्रकार अनेक उपायोंसे वे उन्नतिकामियोंके हौसले धूलमें मिलादेते हैं। पर उनके लिए यदि कोई वज्र है तो वह सच्चरित्रता है। सच्चरित्र मनुष्योंके सामने उनका सिर नीचा होजाता है। सच्चरित्रता एक अग्नि है, जिसमें दुर्जनोंकी दुर्जनता भस्म होजाती है। सच्चरित्रता एक पर्वत है जिसपर दुर्जनरूपी जादू आकर टकराता है और चूर चूर होजाता है। सच्चरित्र मनुष्योंको दुर्जनोंसे कुछभी हानि नहीं होसकती। बहुत कुछ सम्भव है कि इसी सामना करनेमें दुर्जनगण अपने अन्तका चित्र देखने लगे। चाहे कोई मशहूर दुर्जन क्यों न हो, उसकेभी समस्त प्रयत्न सच्चरित्रोंके सामने नष्ट होजाते हैं।

सच्चरित्रताही मनुष्योंका स्वाभाविक गुण है, प्राकृतिक नियमोंका पालन करना नीतिके उपदेशोंके अनुसार चलना,

प्राकृतिक और नैतिक सिद्धान्तोंपर अटल रहना, उनका पालन करनाही सच्चरित्रता है। यही मनुष्यका स्वाभाविक रूप है। पशु और मनुष्योंमें यदि भेद करनेवाला गुण है तो वह सच्च-रित्रताही है। संसारके उन बड़े बड़े स्थानोंको देखो और उन स्थानोंपर बैठे हुए मनुष्योंके जीवनचरित्रकी ओर ध्यानदो, उनकी दिनचर्यापर लक्ष्य दो मालूम पड़ेगा कि उनकी सच्च-रित्रताही उन्हें उस पदतक लेगयी है। जो शासन करनेवाले है, जो सच्चे उपदेशक हैं वे सच्चरित्र हैं। इसके विषयमें ससारके बड़े मनुष्योंकी सम्मति देखो, सुनो वे क्या कहते हैं। नेपोलियन यूरोपका भीम था। उसने कहा है "युद्धमें शारीरिक शक्तिकी अपेक्षा नैतिक बलकीहो प्रधानता है। शत्रुपर विजय प्राप्त करनेके पहल मनुष्यको चाहिए कि वह अपनेपर विजय पाले। अपनेको अपने अधीन करले। जिनने सबसे पहले अपनेको अपने अधीन नहीं किया है, वह कभी युद्धमें विजय नही पासकता" यही बात संसारके जीवन युद्धकी भी है। संसारके जीवन युद्धमें वही विजयी होसकता जिसने अपनेको अपने अधीन करलिया। इन्द्रियदास अथवा प्रकृतिके अधीन चलनेवाले मनुष्योंसे न तो संसारमें आजतक कुछ हुआ है और न आजही कुछ होनेकी सम्भावना है।

सच्चरित्रता राजा और प्रजा दोनोंके लिए कल्याणकारी है। जिस राजाका प्रजावर्ग सच्चरित्र हैं उस राजाको शासनमें कुछ कष्ट उठाना नही पड़ता, राजाका सुराज्य उसकी प्रजाका सच्चरित्रतापरही निर्भर है। अतएव राजा जो कुछ कानून बनाता है, वह जो कुछ दण्डकी व्यवस्था करता है वह सब है प्रजामें सच्चरित्रताके प्रचारके लिए। क्योंकि इसकी उप-योगिता राजाको मालुम है और सोभी आजसे नही किन्तु

बहुत पहलेसे। अतएव 'वृत्तं यत्नेन संरक्षेत् वित्तमायाति याति च" का उपदेश भारतके विचारशील विद्वानोंने दिया है।

तुमको सच्चरित्र बननेका प्रयत्न करना चाहिए। जबतक तुम सच्चरित्र नहीं बनोगे, स्मरण रखो, और सावधानीसे स्मरण रखो, तुम किसी एक काममेंभी सफल नहीं होसकते, तुम बहुत सोच विचारकर कार्य प्रारम्भ करते हो, हृदयमें आशाओंके बड़े बड़े महल खड़े करते हो, पर सफल किसीमें भी नहीं होते, इसका कारण क्या है क्या कभी तुमने इस बात-पर विचार किया है, आजतक तुम किसी एक काममें भी सफल नहीं हुए क्या यह बात बिना कारणकी होगी। तुम कहते हो कि अमुक स्थानपर अमुकने मुझसे शत्रुताकी, अमुक स्थानपर अमुक मनुष्यके दोषसे मेरा काम बिगड़ गया। सोचो क्या ये सब कारण ठीक हैं, क्या संसारमें जो लोग पैदा हुए हैं वे सबके सब तुमसे शत्रुता करनेके लिएही पैदा हुए हैं, तुम्हारे कार्योंमें बाधा डालनाही संसारके मनुष्योंका काम है, इस बातपर तुम्हारा विश्वास है। यदि तुम इन बातोंको कहते हो अथवा इन बातोंपर विश्वास करते हो तो दुःखकी बात है। तुम अनर्थक संसारमें अनेक शत्रु बनाकर अपनी हानिका दूसरा मार्ग तैयार कररहे हो। तुम्हारा कोई शत्रु नहीं है, तुम जो असफल होते हो इसका कारण किसीकी शत्रुता नहीं होसकती। यह बात बिलकुल निश्चित है और मानी हुई है कि किसीकी शत्रुताके कारण कोई असफल नहीं होसकता। तुम्हारी असफलताका यदि कोई कारण है तो वह तुम्हारी दुर्बलता है। ढूँढ़ो तो वह कैसी दुर्बलता है। सम्भव है, एक प्रकारसे निश्चय है कि तुम्हारी इन असफलताओंके कारण तुम्हारे चरित्रकी दुर्बलता है। चरित्रका दुर्बल मनुष्यही बार

बार असफल होता है। यह कभी सम्भव नहीं कि तुम चरित्र-के बलवान होओ और फिरभी बार बार तुमको असफलताका शिकार होना पड़े। यदि तुम्हारा चरित्र दुर्बल है तो सबसे पहले उसे ठीक करनेका प्रयत्न करो, उसको बलवान बनाओ, क्योंकि वही सब प्रकारकी सफलताओंकी नीव है उसीके सहारे मनुष्य उन्नतिकी ओर बढ़ता है। तुममें वह नहीं है, भला अब तुम आगे बढ़ कैसे सकते हो, ऐसी अवस्थामें उन्नतिका नाम लेना सफलताकी ओर देखनाभी तुम्हारे लिए पाप होगा। यदि तुम सफलताके लिए प्रयत्न करोगे तो सफल तो हो नहीं सकते, जब इस असफलताके कारण कोई पूँछेगा उस समय तुम असली कारण नही बता सकोगे, किन्तु बुद्धिको परिश्रम देकर नया कारण गढ़कर बताओगे, तुम समझोगे कि मैंने अपनी सफाई दे दी, पर निश्चय समझो जिसको तुम समझा-रहे हो वह मूर्ख नही है, उसको भी बुद्धि है, वहभी सच्ची झूठी बात पहचानना जानता है, वह असली बात समझ लेगा। तुम्हारी चालाकी कुछ काम न देगी और उसकी दृष्टिसे तुम्हारी प्रतिष्ठा घटजायगी। इस प्रकार थोड़े दिनोंमेंही तुम अपनेको उपहासास्पद बना लोगे। क्या ऐसी अवस्था इष्ट है, यदि नहीं तो कार्य प्रारम्भ करनेके पहले अपने चरित्रको खूब परखो, उसकी कमजोरियोंको बड़ी सूक्ष्म दृष्टिसे विचारो, बहुत कुछ सम्भव है कि तुम्हें कुछ त्रुटि मालूम पड़े, उसको सुधार-लो, कमजोरियोंको दुरुस्त करलो। फिर आवो मैदानमें, सफ-लता मिलेगी, एकदो बार असफल यदि होना पड़े तो उसको उदाहरण मत बनाओ, बढ़ते चलो, वह दिन नजदीक है जबकि तुम्हें सफलता मिलेगी, क्योंकि तुम शुद्धचरित्रके मनुष्य हो।

सच्चरित्रताकेमार्गका त्याग करनेसे यदि तुमको थोड़ा बहुत तत्काल लाभ होता हो तौभी तुमको चाहिए कि तुम उसको न छोड़ो उस मार्गसे विचलित मत होओ। वह लाभ चिरस्थायी नहीं है, उस लाभकी अपेक्षा हानि बहुत अधिक है। एक ताजा उदाहरण मैं लिखता हूं—

अभी थोड़े दिन पहले कहींके किसी एक डिप्टी कलक्टरपर मुकद्दमा चला था। अभियोग यह था कि उसने घूस लेकर न्यायकी मर्यादा नष्टकी है। सरकारने उसको न्याय और शासनके लिए रखा है, उसने उधर ध्यान नहीं दिया, कुछ रुपयोंके लोभमें पड़कर उसने अपने कर्तव्यका पालन नहीं किया। कर्तव्यका पालन न करना एक बड़ा भारी नैतिक दोष है। यह है चरित्र हीनता, इसलिए सरकारने उसको कुछ दिनों जेलमें रहनेकी आज्ञादी। बतलाओ उस थोड़े लाभकी अपेक्षा हानि कितनी अधिक हुई। सरकारका उसपर अविश्वास होगया जनसाधारणका उसपरसे विश्वास जाता रहा। आमदनी मारी गयी नौकरी छूटगयी। मिला क्या, कुछ रुपये हजार पांचसौ। फिर क्यों हानि करनेके लिए प्रयत्न करते हो, क्या यह बुद्धिमानी है ?

कुछ मनुष्योंकी प्रकृति विलक्षण होती है। उनको साहसी प्रकृतिवाला मनुष्य कहना चाहिए। वे अपनेको शब्दोंसे बहुत अधिक सदाचारी और सच्चरित्र बतलाते हैं, यहां तक कि समय पड़नेपर वे सदाचारप्रवर्द्धिनीसभाके मेम्बर होनेके लिए बड़े उत्साहसे आगे बढ़ते हैं, और समयपर मेम्बर होनेके लिए २५) रुपयेभी दे डालते हैं। पर भीतरी कुछ औरही बात होती है। वे मनमानी कार्रवाई करते हैं, सच्चत्रिताका मूल्य उनके सामने कुछभी नहीं होता। वे दोनों ओर साधना चाहते

हैं। इधर लोकप्रतिष्ठाके लिए सच्चरित्रभी बनना चाहते हैं और उधर अपनी प्रकृतिके अधीनभी रहना चाहते हैं उसपर विजय पाना नहीं चाहते अथवा पानहीं सकते । उनकी यह चालाकी कुछ दिनोंतक तो चलजाती है, थोड़े दिनोंतक लोग उनके फन्देमें फँसजाते हैं उनपर विश्वासभी करलेते हैं। पर बात बहुत दिनोंतक छिपी नहीं रहती। थोड़ेही दिनोंके बाद मालुम पड़ता है कि यह २५) रुपये आँखोंमें धूल डालनेके लिए दिये गये थे। असलमें वह विद्रोही हैं सदाचारी नहीं, सच्चरित्र नहीं।

मेरा अनुभव है, मैंने देखा है कि सच्चरित्र मनुष्य अपनी परिस्थितिके अनुसार अपने दलमे सबसे सुखी और प्रधान रहता है। उसके सामने सबसे बड़े धनी और शक्तिमान् दुराचारियोंको नीचे देखना पड़ता है, मुंहके बल गिरना पड़ता है। उसके विरुद्ध चाहे जितनेही प्रयत्न किये जांय वे सबके सब असफल होते हैं। क्योंकि वह सच्चरित्रताकी फौलादी पत्थरसे मढ़ा हुआ है। उसके भीतर घुसना, उसको काटकर छिन्न भिन्न करना साधारण काम नहीं है, असम्भव है और सदा असम्भव है, चरित्रहीनता एक बड़ा भारी छिद्र है, मनुष्य जीवनका । उसी छिद्रसे मनुष्यके प्रयत्न निकल जाते हैं कुछ फल उत्पन्न नहीं करसकते। विरोधियोंके प्रयत्न उसी छिद्रमें आश्रय पाते हैं और भीतर घुसकर बुरे फल उत्पन्न करते हैं।

यदि आप हिन्दू हैं तो इस चरित्रहीनताको राक्षस समझें, यदि वेदान्ती हैं तो अज्ञान समझें और यदि ईसाई हैं तो शैतान समझें। यह भयानक है, संसारको नष्ट भ्रष्ट करदेना इसके लिए कोई बात नहीं। यह जब मनुष्यके समीप पहले पहल पहुंचता है, उस समय कितनेही प्रलोभनभी इसके साथ-

ही रहते हैं। बहुत लोग उन प्रलोभनोंमें फँसजाते हैं और अपने समस्त जीवनको नष्ट करदेते हैं। यह कोई बात नहीं कि थोड़े लाभके लिए समस्त जीवन नष्ट कियाजाय। यह बुद्धि-मानी नहीं है। इस कामसे शत्रु प्रसन्न होते हैं, मित्र नहीं। अतएव ऐसा काम मत करो जो शत्रुओंको प्रसन्न करनेवाला हो, ऐसे मार्गपर मत चलो जो तुमको अपने उद्देश्यसे अपने जीवनके लक्ष्यसे गिरावे। वह मार्ग है चरित्रकी दुर्बलता। अतः सिद्धिकामियोंको इधर अधिक ध्यान देना चाहिये। यदि तुम बी० ए० एम० ए० पास नहीं करसके हो तो कोई विशेष चिन्ताकी बात नहीं है, पर यदि तुम सच्चरित्र नहीं हो तो समझो तुम्हारा नाश होगया, तुम्हारे लिए संसारकी सब उन्नतियोंके मार्ग बन्द होगये। तुम्हारी सच्चरित्रता कुछ अहंमन्य मूर्ख दुराचारियोंको खटकेगी, खटकने दो, यह स्वाभाविक बात है, तुम अपने मार्गपर डटे रहो, लाभ होगा, सिद्धि मिलेगी॥

सङ्गी साथी ।

तुम्हारा कर्तव्य निश्चित हो चुका, तुमको कौनसी सिद्धि चाहिए इस बातका ज्ञान तुमने कर लिया, उसके लिए किन साधनों—किन उपायोंकी आवश्यकता है यह बात भी तुमने जानली । अब आवश्यकता इस बातके जाननेकी है कि तुम्हारा प्रयत्न किस प्रकार शीघ्र फलवान् होगा । किस प्रकार तुम्हारे प्रयत्नमें होनेवाले बाधा विघ्न दूर किये जासकेंगे । इन बातोंके ज्ञानकी भी बड़ी आवश्यकता है ।

तुम यदि किसी धनीके लड़के हो अथवा तुम्हारे सहायक बड़े बड़े आदमी हैं, यदि तुमको अपने पिताकी प्रतिष्ठा तथा अपने सहायकोंकी सहायताके द्वारा ऊंचा पद मिलनेकी सम्भावना है तो तुम्हारे सङ्गी साथी भी बहुत मिलेंगे । वे अनेक प्रकारके होते हैं, कोई तुमको उत्तम उपदेश देनेके लिए आवेगा कोई तुम्हारे कामोंमें तुमको सहायता देनेके लिए आवेगा, कोई आकर तुमको बतलावेगा कि तुम्हारे शत्रु इस प्रकारके षड्यन्त्र तुम्हारे विरुद्ध रचरहे हैं, तुमको इस प्रकार उनका सामना करना चाहिए, इस प्रकार उनको नीचा दिखानेका प्रयत्न करना चाहिए । कोई आवेगा और कहेगा, मैं तुम्हारे दादाकी बूआके लड़केके सालेका लड़का हूं, कोई आकर कहेगा, मुझे तो कामही क्या है, चला आता हूं केवल देखनेके लिए, तुम्हारी सुशीलता विनय आदि गुण मुझको बहुतही अच्छे लगते हैं । कोई आवेगा और तुम्हारे ऊपर अमुक दुःख आनेवाला है, तुमपर अमुक कष्ट पड़नेवाला है, भइया, मैं तो सदा तुम्हारे हितहीकी चिन्ता किया करता हूं, मैं तो तुमको और अपने लड़कोंको बराबर समझता हूं, इसीसे

ज्योतिषीजीसे तुम्हारा जन्मपत्र मैंने दिखलाया था, उन्होंने जो बातें कहीं, उनसे मेरा हृदय दहल गया। तुमको चिन्ता करनेकी ज़रूरत नहीं है, मैं सब करलूंगा, रुपयोंका ख़र्च है तो क्या कियाजाय, रुपये भी तो तुम्हीं लोगोंके लिए हैं, तुम्हारे कल्याणके लिए कुछ ख़र्च होजाय, हमको कुछ कष्ट उठाना पड़े इसकी चिन्ता क्या है, तुम लोग जीते रहोगे तो न मालुम कितना आवेगा, इस प्रकार हितैपिताका ढौंग रचकर वे तुमपर अपना प्रभाव जमानेका प्रयत्न करेंगे। कुछ लोग आवेंगे, और तुमको उपदेश देंगे कि क्यों इतना परिश्रम करते हो आनन्दसे समय विताओ, अमुकने कैसा आनन्द किया अमुक किस प्रकार सुखी है, आदि बाते उपदेशके द्वारा तुमको समझानेका प्रयत्न करेंगे। इस प्रकारके अनेक सङ्गी साथी तुमको मिलेगे। कुछ लोग आकर तुम्हारी खुशामद करेंगे, सो भी इतनी जो उचित और आवश्यकतासे अधिक होगी। उस समय कितने मनुष्य तुम्हारी खुशामद करने आवेंगे, वे कितने वेषके होंगे यह बतलाया नही जासकता।

इस प्रकारके अनेक बने हुए साथी होते हैं। इनका तुमसे कुछभी प्रेम नही है, ये तुम्हारे द्वारा अनुचित स्वार्थका साधन करना चाहते हैं। ये चाहते हैं तुमको बातोंसे प्रसन्न करना और अपना मतलब गाठना। इनसे सावधान रहो। सोचलो कौन तुम्हारा असली साथी है और कौन तुम्हारा नक़ली साथी है, नक़ली साथियोंसे बचे रहो और असली साथियोंसे प्रेम करो। नक़ली साथियोंको तुम्हारी हानि लाभसे कुछ मतलब नहीं है, वे चाहते हैं अपना कल्याण, तुम्हारे द्वारा अपने स्वार्थका साधन। वे तुम्हारी हानि करके भी अपना कल्याण करसकते हैं, वे तुमको गढ़ेमें गिराकर भी आप ऊंचे

उठ सकते हैं। इस प्रकारके क्रूराचार साथियोंसे जहांतक बन पड़े बचनेका प्रयत्न करो। असली साथी तुम्हारा साथी है, वह तुम्हारे द्वारा अपना स्वार्थ नहीं चाहता, वह अपनेको इतना दुर्बल इतना शक्तिहीन नहीं समझता कि वह तुम्हारी ओर सहायता पानेकी आशासे देखे। वह चाहता है तुम्हारा कल्याण, यदि तुम कल्याणके मार्गको छोड़कर दूसरे मार्गसे जारहे हो उस समय वह तुमको सावधान करेगा, तुमको वतलावेगा कि इस मार्गसे चलो, इस प्रकार काम करो, यदि तुम्हारी दुर्बलता बढ़ी हुई होगी तो उसको दूर करनेके लिए कड़े उपायोंका भी अवलम्बन करेगा। उसकी इन बातोंसे घवड़ाओ मत, क्रोध मत करो, अपने नक़ली मित्रोंके कहनेमें मत आओ, यदि अपना कल्याण चाहते हो तो उसी असली साथीके द्वारा बतलाये उपायोंका अवलम्बन करो चाहे वे कड़े हों, चाहे उनके अनुसार काम करनेमें कठिनाई उठानी पड़े। चिन्ता मत करो, रोग दूर होगा, पर ओषधिका सेवन करना मत छोड़ो। उन चमकीले और प्रिय मालुम होनेवाले उपदेशों-से घृणा करो उनमें अधिकांश तुमको नीचे लेजानेवाले हैं, अधिकांश तुमसे अपने स्वार्थका साधन करनेवाले हैं। उनकी बातोंमें मत आओ, उनकी बातें बनावटी हैं, मौकेपर कोई काम नहीं आवेगा। अतएव ऐसे नररूपधारी पिशाचोंसे सदा सावधान रहनेकी आवश्यकता है।

तुमको अनेक सङ्गी साथी आकर मिलेंगे। यह बात लिखी जाचुकी है कि वे सब तुम्हारे साथी नहीं हैं। इस बातकी परीक्षा करो कि कौन तुम्हारा साथी है। कौन सच्चा है, इसका निर्णय करके केवल उसेही साथी बनाओ, औरोंको नमस्कार करो। वे तुमपर नाराज होंगे होने दो, उनकी

नाराजीसे कोई हानि न होगी। भला जिसकी प्रसन्नतासे कोई लाभ नहीं होता उसकी अप्रसन्नतासे हानि होगी यह बात कैसे मानी जाय, जो मनुष्य स्वयं अपना स्वार्थभी सिद्ध नही करसकता और उसीलिए वह तुम्हारी गुलामी करनेको आया है, भला वह तुम्हारी हानिही क्या करसकता है अतएव यह भय निर्मूल है, निरर्थक है। इस विषयकी एक कथा सुनो। एक राज्यके दीवानका नाम विश्वम्भरनाथ पाठक था। उनके पुत्रका नाम था विश्वनाथ। विश्वनाथ जवान था। पढ़ा लिखा था, उसके पास धन था। उसके मित्रभी स्वभावतः अनेक थे। वह सदा मित्रोंहीके यहां घूमा करता था और मित्रोंका दल उसके यहां उपस्थित रहा करता था। एक दिन वृद्ध पिताने अपने पुत्रसे कहा, भाई, ये कौन तुम्हारे यहां आया जाया करते हैं, और तुमभी भर दिन कहां रहा करते हो, पुत्रने उत्तर दिया, बाबूजी, ये मेरे मित्र हैं, मेरे यहां मेरे मित्र आया जाया करते हैं और मैं भी अपने मित्रोंके यहां आया जाया करता हूं। पिताने कहा तुम्हारा सबसे बड़ा मित्र कौन है, किसपर तुम्हारा अधिक विश्वास है? पुत्रने उत्तर दिया मेरे सभी समान मित्र हैं और इन सबपर मेराभी समान विश्वास है। यह सुनकर पिताको बड़ा आश्चर्य हुआ, उन्होंने कहा, ऐसा हो नहीं सकता; अच्छा तुम अपने मित्रोंसे परीक्षा दिलवा सकते हो। पुत्रने पिताकी बात स्वीकार करली। एक दिन रातको पिता पुत्रको लेकर घरसे निकला और पुत्रके एक मित्रके घर उपस्थित हुआ। उस समय मित्र सो रहे थे, उठाये गये और आंखें मलते मलते वे बाहर आये। विश्वम्भरनाथने उनसे कहा, भाई, तुम इनके मित्र हो, यही समय है मित्रताके परिचय देनेका। इन्होंने (अपने पुत्रकी ओर दिखाकर) राज-

पुत्रको मारडाला है, शीघ्रही अपने यहां इनको आश्रय दो, नहीं तो इनकी बड़ी दुर्दशा होती है। उन्होंने, कहा खूनी, खूनी, खूनी मेरा मित्र कैसा, मैं तो इसको पहचानताभी नहीं। जाल रचने आया है। चलो नहीं पुलिसको बुलाता हूं। अपने विश्वासी मित्रकी सज्जनता देखकर विश्वनाथ चुपही रहे और अपने पिताके साथ वहांसे आगे बढ़े। इसी प्रकार विश्वम्भरनाथ अपने पुत्र विश्वनाथके साथ उनके कई मित्रोंके पास गये पर सब जगह उसी प्रकारके उत्तर मिले। अन्तमें थककर विश्वनाथने अपने पितासे कहा, पिताजी क्षमा कीजिए मेरा अज्ञान था। मेरा मित्र कोई नहीं है, जिनको मैं मित्र समझता हूं असलमें वह मित्र नहीं है। तब वृद्धने कहा भाई मेरा तो एकही मित्र है, चलो उसके पासभी चलें देखें, वह कैसा निकलता है। वृद्ध अपने मित्रके पासगया। जाकर उसने कहा, मैंने आज राजाको मारडाला है और छिपनेके लिए तुम्हारे यहां भागकर आया हूं। उसने कहा, तुमने बड़ा बुरा कामकिया। पर कुछ चिन्ता मत करो, मेरे रहते तुम्हारा कुछभी विगड़ नहीं सकता। जो कुछ होगा मैं स्वयं अपने ऊपर लेलूंगा। चलो शीघ्र घरमें चलो नहीं तो राजाके सिपाही आते होंगे तुमको पकड़ लेंगे और बातें विगड़ जायँगी। दीवानका पुत्र इन बातोंको सुनकर चकित होगया और वह अपने पिताके मित्रके पैरोंपर गिरपड़ा। तदनन्तर विश्वम्भर-नाथने हँसते हुए सब बातें कह सुनायी। तबसे विश्वनाथने अपने मित्रोंकी माया ममता छोड़दी, और काममें लगगया, अब न तो उसका समयही व्यर्थमें जाता है और न वह निकम्माही बैठा रहता है। सङ्गी साथियोंका रहस्य उसे पूरा पूरा मालुम होगया। वह सुखी हुआ और अपना काम आप करने लगा।

यह कथा है, मालुम नहीं सच्ची या काल्पनिक, यदि काल्पनिकही हो तौभी इसकी सत्यता माननी चाहिए, क्योंकि इस प्रकारकी अनेक घटनाएँ देखी जाती हैं। फिर कोई कारण नहीं है कि इस कथाकी सत्यतापर विश्वास न किया-जाय। मानलो तुमको कोई वैसाही अच्छा मित्र मिलगया। जो तुम्हारा असली साथी हो। पर इन विषयोंमें भी तुमको सावधान रहना चाहिए, क्योंकि वहुतसे तुम्हारे नक़ली मित्र इस बातको फूटी आंखोंसे भी न देखेंगे। वे विविध प्रकारके प्रयत्न करेंगे कि जिससे तुम दोनोंमें विरोध उत्पन्न होजाय, वे जाकर उसकी बहुतसी झूठी बातें तुमको समझावेंगे, वे कहेंगे वह तुम्हारी शिकायत करता था, वह तुम्हारी कई गुप्त बातें लोगोंसे प्रकाशित करता था। उन सज्जनोंकी ऐसी बातोंपर विश्वास मत करो। उस समय तुमको सावधानीसे कामलेना चाहिए, तुमको सोचना चाहिए कि जो मेरा ऐसा मित्र था वह एकाएक बदल क्यों गया। तुम जाकर उससे पूछो, अमुक मनुष्य ऐसा कहता था, बात क्या है। बस, सब बातें साफ़ होजायँगी झूठ सचकी बातें खुल पड़ेंगी। दुष्टका मुंह काला होजायगा, तुम्हारी रक्षा होजायगी। दुर्जन तुम्हारा कुछभी विगाड़ न सकेगा। यदि तुमने उस समय सावधानीसे काम न लिया तो बस, "दुर्जनान्तं च सख्यम्" की कहावत ठीक होजायगी। तुम्हारे और तुम्हारे असली मित्रके बीच एक दुर्जन घुस जायगा और वह तुमको मिट्टीमें मिला देगा, तुमको वदनाम करदेगा। तुमको मुंह दिखाने लायक़ नहीं रहने देगा। तुम कहोगे लोगोंसे कि अमुक हमारा मित्र है, और वह लोगोंसे कहेगा, उल्लूको फाँसा और बनाकर छोड़दिया। ऐसे अवसर सावधान होनेके हैं। ऐसे समयमें जो सावधानी

करसकेगा वही जीवित रहेगा, उसीकी इज़्ज़त प्रतिष्ठा बची रह सकेगी, वही सिद्धि पासकेगा ।

तुम यदि किसीसे साथ करो, देखलो, पहले कि उसके विषयमें लोगोंकी क्या धारणा है, लोग उसको क्या समझते हैं, तदनन्तर उसके कार्योंपर विचार करो । वह क्या करता है, उसका व्यापार क्या है, उसके सङ्गी साथी कैसे हैं, उसके रहनेके स्थानपर जाओ और देखो उसके यहां कैसी वस्तु रखी हैं, उसके घरमें जो चित्र हैं वे कैसे हैं । आदि बातोंका खूब ध्यानपूर्वक विचार करो । साथही यहभी देखो कि वह जिन मनुष्योंकी शिकायत तुमसे करता है उनके सामने उसका कैसा व्यवहार रहता है । वह तुम्हारे मुंहपर तुम्हारी अधिक प्रशंसा तो नहीं करता । इन बातोंका विचार करनेसे उसकी असली दशा तुमको मालुम होजायगी । इन बातोंपर विचार करनेसे यदि तुमको यह निश्चय होजाय कि यह अच्छा आदमी है, तो उससे साथ करो, पर पूरा विश्वास मत करो । उसके सामने अपने छोटेसे छोटे कामोंको रखो, इससे तुम्हारा अनुभव बढ़ेगा और उसके असली स्वरूपका भी पता लग जायगा । मालुम होजायगा कि ये किस ढंगके सज्जन हैं, इनके साथसे हानि होगी या लाभ । किसीकी ऊपरी बातें सुनकर जल्दी मत मचल पड़ो । हानि उठाओगे ।

मित्रताके लिए किसी बड़े आदमीके द्वारपर मतजाओ, क्योंकि वहां मित्रताका मसाला नहीं रहता है । वह है खुशामदका बाज़ार । उस बाज़ारमें—यदि खुशामद करनेकी सामग्री तुम्हारे पास हो, उतना अनर्थक समय तुम्हारे पास हो मनुष्यत्व खोकर पशु बननेकी इच्छा हो तो बराबर ...ते हो । कोई कोई मिलभी जाते हैं । धनियोंमें भी

तुम्हारे मैत्रीके योग्य कभी कभी कोई मिलजाते हैं। पर प्रेमसे नहीं कर्तव्यसे नही; किन्तु स्वार्थसे। तुमसे यदि उनके किसी स्वार्थका साधन होता होगा तो वे तुम्हारे मित्र वनजायंगे। स्वार्थसिद्ध होनेपर तुम अपने घर और वे अपनी कोठीपर। उसको कुछ लोग मैत्री कहते हैं पर मैं कहता हूं दास और मालिकका क्षुद्र सम्वन्ध। मेरेभी इसी प्रकारके एक मित्र कहो या मालिक थे। उन बिचारेका अचानक परलोक हुआ। अव उनके पुत्र घरके मालिक हुए। वे हमारे यहां कई बार आये थे, बिचारे छोटी उमरके, ज्ञान कुछ थाही नहीं। उन्होंने मेरी बुरी तरह खुशामदकी वात छेड़ी। मैं ऐसे मनुष्योंसे बहुत पहलेसे घृणा करता था। मैंने उस माननीय सज्जनको सीधे चले जानेके लिए सविनय अनुरोध किया। वात खतम हुई।

कुछ खास हृदय हैं, जिनमें मैत्रीकी सामग्री रहती है, उनसे मैत्री करनी चाहिए, लाभ होता है। देखो, तुम उस मनुष्यसे मैत्री करो जिसके उद्देश्य तुम्हारे उद्देश्यसे मिलते हों। जो तुम्हारी प्रकारकी सिद्धि चाहता हो। मिलजाओ निर्भय होकर उससे, उसमें एक दो दोषभी हों तो कोई चिन्ताकी बात नहीं। वह तुम्हारी हानि नहीं करसकता, यदि हानि करेगा, तो उसकी भी हानि होगी, क्योंकि वहभी वही चाहता है जो तुम, फिर वह हानि पहुंचानेका प्रयत्न न करेगा। पर उससे सावधान रहो अवश्य।

तुम्हारा प्रत्येक अवस्थाको सावधानी शक्ति और वलसे शून्य नहीं होना चाहिए। वल और शक्तिसे कार्य प्रारम्भ करो, सावधानीसे उसके मार्गमें आनेवाले वाधा विघ्नोंको दूर करदो। यही मार्ग है। मैत्रीमें, साथमें उपचार नहीं होता, दिखाऊ

बातें नहीं होतीं। जो लोग ऐसा करें उनसे कहो, माननीय सज्जनको नमस्कार।

तुम जिसको अपना साथी बनाओ उसको सदा अच्छे मार्गपर लेचलनेका प्रयत्न करो, सदा उसके उपदेशोंको सुनो, उसके लिए शास्त्रार्थ करके तय करलो। सन्देह हो शीघ्र मिटालो। उसको अनर्थक प्रसन्न करनेका प्रयत्न मत करो। सदा उसके भावी कल्याणकी ओर दृष्टि रखो। असत्यता, विश्वासघात और स्वार्थ मैत्रीके नाशक हैं, इन सबसे अधिक दुर्जनोंका सम्पर्कभी दो मित्रोंको अलग करदिया करता है। अतएव तुमको इन बातोंपर ध्यान रखना चाहिए॥

विनय और विश्वप्रेम ।

तुमको विनयी होना चाहिए, और समस्त संसारपर तुम्हारा प्रेम होना चाहिए। विनय हृदयका गुण है, इसके विकाशसे हृदय और आत्मा पुष्ट होते हैं। अहङ्कारसे विनयका नाश होता है, अहङ्कारी मनुष्य विनयी नहीं होसकता। अतएव तुमको प्रयत्न करना चाहिए जिससे तुममें अहङ्कार न आने पावे। अहङ्कार सब गुणोंका शत्रु है, अहङ्कारी मनुष्य कोईभी अच्छा काम नही करसकता। उसे सदा अपने अहङ्कारकी रक्षाकी चिन्ता बनी रहती है। वह समझता है कि मैंने यदि अपने अहङ्कारकी रक्षा करली तो मेरा जन्म सफल होगया। वह इतना अज्ञानी इतना नासमझ होजाता है कि अच्छी और बुरी बातोंका उसे ध्यानही नही रहता। अहङ्कार एक प्रकारकी नशा है, जो इसके फन्देमें फँसा वही गया। इसका स्वभाव विलक्षण होता है वह देखता है सही, पर उल्टा, वह समझता है सही, पर उल्टा। जो मनुष्य अहङ्कारके मदमें चूरहुआ रहता है वह उसेही अच्छा समझता है जो बुरा है, वह वही काम करता है जो न करना चाहिए, वह उसी मार्गपर चलता है जिसपर न चलना चाहिए। भला, आपही लोग सोचें कि इस प्रकारके मनुष्यका कल्याण होसकता है? इस प्रकारके मनुष्यमें वह बल आसकता है, वह शक्ति आसकती है, जिससे वह कुछ काम करसके। क्या वह अपने हितके लिए अपने कल्याणके लिए किसी गुणका उपार्जन करसकता है? असम्भव है अहङ्कारीके लिए किसी अच्छे कामका करना। असम्भव है अहङ्कारीके लिए किसी अच्छे मार्गपर चलना।

अहङ्कार मूर्खतासे होता है, मूर्खता अन्धी है। वह बतलाती है कि तुम विद्वान् हो बुद्धिमान् हो, सुन्दर हो, बल-

वान् हो, गुणी हो । भलेही तुममें इन बातोंकी गन्धभी न हो, पर मूर्खता तुमको दिनरात इन्हीं बातोंपर पाठ पढ़ाया करेगी। जब मूर्खताके सच्चे शिष्य बन जाओगे, जब उसके तुम अनुगत बन जाओगे तब अच्छे अहङ्कारियोंमें तुम्हारी गणना होने लगेगी, तुम्हारे द्वारा अच्छे कामोंका होना रुक जायगा। क्योंकि अहङ्कारके द्वारा तुम्हारी बुद्धि मारी जायगी, अहङ्कार तुम्हारी विचारशक्तिको नष्ट कर डालेगा, वह तुमको मूर्ख और अविवेकी बना डालेगा । वह तुमको निकम्मा बना डालेगा। उसके कारण तुम्हारी वह गति होजायगी, जिसे तुम चाहते नहीं, जो तुम्हें इष्ट नही है। जानते हो वह अहङ्कार क्या है, वह है मिथ्या ज्ञानका विकाश।

मूर्ख मनुष्य समझता है कि मैं बड़ा विद्वान् और शक्तिमान हूं । उसकी यह समझ यद्यपि झूठी होती है, पर वह अपनेको ऐसाही समझता है। वह अपनेको बड़ा विद्वान् और बुद्धिमान् समझकर बड़े कामोंको करने बैठता है। पर वे काम सिद्ध कैसे होसकते हैं। क्योंकि उसके पास तो वह साधन है ही नहीं जिससे कोई कार्य सिद्ध हो । तुम्हारी समझ है रहा करे, तुम्हारी समझहीसे तो विद्वत्ता और शक्तिमत्ता नहीं होजाती। तुम्हारी समझ कुछ और वस्तु है और विद्वत्ता तथा शक्तिमत्ता कुछ और वस्तु हैं। तुम्हारी समझसे कुछ होने जानेवाला नही। तुम्हारी समझ कुछ और वस्तु है और वस्तु कुछ और। तुम समझतेहो अपनेको कि मैं इन्द्र हूं, बृहस्पति हूं, यह तुम्हारी समझ पक्की होगयी है, लोग तुमको समझाते हैं तुम मानते नहीं । तुम अड़े बैठेहो। तुम यदि इस पकड़को पकड़ेही बैठे रहते और किसीसे छेड़छाड़ न करते तो कुछ हानि न होती, पर तुमतो वैसा नहीं करते। तुमतो अपने

अहङ्कारके मदमें मस्त होकर संसारको तुच्छ समझ रहे हो, संसारकी उपेक्षा और तिरस्कार कर रहे हो । भला सोचो, संसार तुम्हारी उपेक्षा और तिरस्कार क्यों सहेगा। वह तुम्हारी मूर्खता पर तुम्हारे अज्ञानपर हँसेगा और दुःखी होगा, तथा सदाके लिए तुमसे मुंहमोड़ लेगा। जब तुम्हारे देशकी और समाजकी सहानुभूति तुमसे जाती रहेगी, उस समय तुम ऐसे निकम्मे बन जाओगे कि कुछ पूछो मत। अब तुम किसी काम लायक़ नही रह जाओगे, कोईभी भला आदमी तुम्हारे कार्योंमें योग न देगा, कोईभी शक्तिमान् और विद्वान् तुम्हारी ओर न देखेगा। अब तुम अपने घरमें मूर्खता मिथ्याज्ञान और अहङ्कारको लेकर बैठे रहो, बुद्धि हो तो पछताना नहीं तो अच्छाही है प्राण बचे।

तुमको अभिमानी बनना चाहिए, अहङ्कारी नहीं । तुममें जो गुण है जो शक्ति है जो बल है उसका अधिकारी अपनेको समझना अभिमान है, अभिमान बुरी वस्तु नहीं है, किन्तु उसका न होनाही बुरी वस्तु है और हानिकारी है। जिस प्रकार अहङ्कारके होनेसे मनुष्य बेकार होजाता है, उसी प्रकार अभिमानके न होनेसे। अहङ्कार पाप है और अभिमान पुण्य । अभिमानी मनुष्य अपनेको बनाता है और अहङ्कारी मनुष्य अपनेको छार खार करदेता है। अभिमानी मनुष्य समझता है कि मैं अमुक वस्तु हूं, मेरी इतनी शक्ति है, मेरा इतना बल है, इतनी विद्या है. वह अपनेको जैसा समझता है वैसाही काम प्रारम्भ करता है, इससे लोग उसपर प्रसन्न होते हैं उसके विचार और विवेककी प्रशंसा होती है, उसके कार्य सफल होने लगते हैं, उसका जीवन धन्य होजाता है, वह अपने लिए अपने देश और समाजके लिए एक लाभकारी

वस्तु प्रमाणित होजाता है । क्योंकि वह अपनेको जानता है । पर अहङ्कारीके लिए ये वातें नही हैं । वह है गीदड़ तो समझता है अपनेको शेर । बढ़कर हाथियोंपर पञ्जा फैलाना चाहता है और उनके मोटे मोटे पैरोंसे कुचला जाता है । अतएव अभिमानी वनना अच्छा और अहङ्कारी वनना बुरा है ।

तुमको अभिमान है कि मैं अच्छा हूं । तुम्हारा वह अभिमान तुम्हारी सदा रक्षा करेगा बुरे कामोंसे । तुमको कभी वैसे काम न करने देगा जिससे तुम्हारे अच्छापनमें वट्टा लगे । परिस्थिति और प्रभोलन आकर तुमको दवावेंगे, वे कहेंगे इस कामको करलो, नही तो यह प्रत्यक्ष हानि होगी, वे आकर तुमसे कहेंगे कि देखो यह लाभ होता है, क्यों छोड़ते हो । तुम्हारा चित्त डांवाडोल होगा । क्या करना चाहिए और क्या न करना चाहिए, इस वातका निश्चय करनेके लिए तुम व्याकुल होजाओगे उस समय आवेगा तुम्हारा अभिमान और वह तुमको वतलावेगा कि क्यों इस उधेड़वुनमें लगेहो । यह सोचो कि संसार तुमको क्या समझता है और इस कामके करनेसे क्या समझेगा । वस, इसका निश्चय करके जैसा चाहो करडालो । इन वातोंके सुनतेही तुम अपना कर्तव्य निश्चित करलोगे । तुम्हारे पैर कभी बुरे कामोंकी ओर न उठेंगे । तुम सदा भले वने रहोगे और अपना काम अच्छी तरह करते जाओगे ।

जिस दिन तुमको यह वात मालुम होजायगी कि अहङ्कारसे हानि होती है, अहङ्कारका यह स्वरूप है उसी दिन यदि तुममें बुद्धि होगी और यदि तुम अपना कल्याण चाहोगे तो अहङ्कारको दूर भगाओगे, उसके पास तक जानेमें तुमको

संकोच होगा। इसीसे कहता हूं कि तुम प्रयत्न करो जिससे अहङ्कारका स्वरूप मालुम होजाय।

तुम अहङ्कार करोगे किससे, तुम अपनेको बड़ा समझोगे किससे. इसपर तो जरा विचार करलो। संसारमें जब देखते हो कि तुमसे कुछ मनुष्य कम गुणी हैं, तो हज़ारों ऐसेभी तो हैं जो तुमसे अधिक गुणी और अधिक प्रतिष्ठित है। ऐसी स्थितिमें क्या अहङ्कार तुमको शोभेगा। क्या तुम्हारा अहङ्कार देखकर कोई तुमको सराहेगा। यह मत समझो कि तुम्हीं सबसे अच्छे हो। जनसमाजके सर्टिफ़िकेटका कोई मूल्य नहीं, वह खुशामदसे भी मिला करता है, प्रेमसे भी उसकी प्राप्ति होती है. इसी प्रकारके कई साधन है। यदि तुम अपने सर्टिफ़िकेटोंपर गर्व करते हो तो वह अनर्थक है, इसलिए कि वह बाजारू है उसका कोई मूल्य नहीं। बहुतसे ऐसे मनुष्य पड़े हुए हैं, जिनके पास सर्टिफ़िकेट नहीं है. पर वे योग्य हैं। उनकी योग्यता सर्टिफ़िकेटी योग्यतासे कहीं बढ़कर है, फिर बतलाओ किस बातका गर्व और क्यों गर्व।

जिसको अहङ्कार नहीं वह विनयी होता है। विनय एक बड़ा गुण है। अहङ्कारमें जितने दोष है उनसे बढ़कर विनयमे गुण हैं। विनय अहङ्कारके दोषोंको मिटाता हैं। उससे नयी बातें सीखनेका अवसर मिलता है। विनयी मनुष्यको सभी लोग चाहते है, सभी लोग उससे प्रेम करते हैं उसपर दया करते हैं। फिर अहङ्कारके लिए इस गुणका बलिदान क्यों करते हो। क्यों मुक्ताफल छोड़कर ज़हरीले फलकी ओर हाथ बढ़ाते हो। क्या यह बुद्धिमानी है, क्या तुम्हारे ये आचरण तुमको सर्वप्रिय बनासकेंगे, क्या तुम विनयका त्यागकर अहङ्कारके

द्वारा सिद्धि पानेकी आशा करते हो, यदि तुम ऐसा करते हो तो निःसन्देह दुःखकी बात है।

विनयका सहचर विश्वप्रेम है। हृदयको उच्च बनानेके जितने गुण हैं वे सब विश्वप्रेमसे प्राप्त होते हैं। तुम संसारसे प्रेम करो क्योंकि संसार तुम्हारा है, तुम संसारके हो। संसारको तुमसे लाभ है और तुमको संसारसे लाभ है। अतएव तुमको चाहिए कि तुम संसारसे प्रेम करो। तुम अपने छोटे हृदयको संसारके बड़े हृदयसे मिलादो, संसार तुम्हारा प्रधान है. और तुम संसारके अप्रधान। संसार अङ्गी है और तुम अङ्ग हो। ससारको पुष्ट करनेवाले कार्योंका अनुष्ठान करना तुम्हारा प्रधान कार्य होना चाहिए। संसारके पुष्ट होनेसे तुम्हारीही पुष्टि होगी।

तुम्हारे सत्कार्य सद्‌ज्ञान और सद्विचारसे संसारको लाभ होता है। इन बातोंका संसारके अन्यवासियोंपर प्रभाव पड़ता है वेभी अपने जीवनक्रमको इसी ढवपर गठित करते हैं, इससे संसारकी शक्ति वलवती होती है। लोग जब तुम्हारे सत्कार्य सद्‌ज्ञान और सद्विचारोंको देखेंगे, जब इनका सौरभ फैलेगा उस समय गुणलोभी भ्रमर तुम्हारी ओर आप खिंचे आवेंगे, तुमसे वे इन उत्तम गुणोंका अभ्यास करेंगे और उनका जीवन धन्य होगा। संसारमें तुम्हारा एक बलशाली दल होगा, वह दल उन गुणोंका अन्यत्र प्रचार करेगा। कितनेही मनुष्योंका उपकार होगा।

शारीरिक मानसिक और वाचिक पवित्रता तथा सत्यता-से ही संसारका कल्याण होता है। इन्हीं बातोंसे संसार पुष्ट होता है और उसकी पुष्टिके साथही तुम्हारीभी पुष्टि होती है।

यह सिद्धिका मन्त्र है, इसको कभी मत भूलो । कुछ सज्जन तुम्हारे पास आवेंगे । कहेंगे संसारमे सज्जनता और सत्यतासे काम नही चलता । उनकी बात मत मानो क्योंकि वे मूर्ख है। उनको किसी विषयका ज्ञान नही है । सोचो क्या संसारमे ऐसाभी कोई आदमी है, ऐसाभी कोई दल है जो सज्जनता और सत्यतासे प्रकाश्य रूपसे द्वेष करे । क्या कोई ऐसाभी है जो सज्जनता और सत्यताकी खुल्लम खुल्ला निन्दा करे, लोगोंको उपदेश दे कि सज्जन मत बनो, सत्यका आदर मत करो। अधमसे अधम मनुष्यभी तो अपनेको सज्जन और सत्यप्रेमी सिद्ध करनेका प्रयत्न करते है । अधिक क्या कहैं, जो सज्जन तुमको युगधर्मका उपदेश देते हैं जो तुमसे कहते हैं कि सज्जनता और सत्यताका जमाना नही, उनको तुम दुर्जन और असत्यवादी कहो, देखो वे तुमसे क्या कहते हैं, उनका निर्विकार शरीर कैसा विकृत होजाता है। वे तुमपर कितना विगड़ते हैं । जब उनको ऐसी दशा होजाय, तब तुम उनसे नम्रतापूर्वक पूछो महात्मन् आप विगड़ते क्यों है ? यदि आप इन बातोंको बुरा समझते है तो दूसरोंको वैसा बननेका उपदेश क्यों करते हैं ? यह कैसी बात है कि जिसको आप अच्छा न समझें, उसी कामको करनेके लिए लोगोंको उपदेश दें। वे यदि तुमपर कृपा करें और समझावें कि तुमको संसारका अनुभव नही है, छिपकर वे बाते करनी चाहिए और प्रकाश्यमें अपनेको महात्मा बुलाकी बाबा सिद्ध करना चाहिए। ऐसे आदमियोंसे छिः करो । वे तुमको चोरी करना बतलाते हैं डाकाडालनेका उपदेश देते है । राजाके क़ानून तोड़नेके लिए बहकाते है । वे हैं तुम्हारे शत्रु, अथवा मूर्ख मित्र । अब तुमको चाहिए कि उनको समझाओ सुधारो, यदि बात कठिन

मालुम पड़े तो छोड़ो, स्वयं न फँसो, अपनी रक्षाकरो इस ग्राहके पंजेसे।

जानते हो याज्ञवल्क्यसे लेकर आजतक जितने दण्ड व्यवस्थापक हुए हैं, उन लोगोंने दण्डकी व्यवस्था किसके लिए की है। सत्यप्रेमी सदाचारी और सज्जनको भी तुमने कभी दण्डित होतें देखा है। सज्जन होनेके कारण अथवा सत्यवादी होनेके कारण किसीको दण्ड मिलता है अथवा पीनलकोडकी ऐसी कोई धारा है जो इनके दण्डका विधान करती हो। न मालुम, हो किसी वकीलसे पूछो। पर मैं तुमको विश्वास दिलाता हूं कि दुर्जन और असत्यवादियोंके लिए दण्डका विधान है। इनको केवल राजा ही दण्ड नहीं देता, किन्तु समाज और व्यक्तिभी इन्हें घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। फिर बतलाओ इस प्रकारके उपदेश देनेवाले तुम्हारे मित्र कैसे हो सकते हैं, वे या तो तुम्हारे शत्रु हैं अथवा मूर्ख मित्र हैं यह बात सदा स्मरण रखो।

जिसे लोग घृणित समझते हैं उस ओर तुमको पैर नहीं बढ़ाना चाहिये। घृणित गुण कौन हैं जानते हो, वेही गुण घृणित हैं जो संसारको हानि पहुंचानेवाले हैं। जिनसे संसार-की पुष्टिमें बाधा आती है। फिर तुम अपनेको घृणित गुणोंसे युक्त होना क्यों पसन्द करते हो।

संसारकी भलाईके लिए और अपनी भलाईके लिए तुमको संसारमें सत्यकार्य और सदाचारका प्रचार करना चाहिए। ईश्वर और राजाके नियमोंका दृढ़तापूर्वक पालन करने और पालन करानेका प्रयत्न करना चाहिए। ध्यानपूर्वक प्राकृतिक कार्योंको देखो, और राजाके विधि विधानोंपर विचार करो।

तुमको मालुम होगा कि इस विषयमें सभी एक मत हैं, सभी एक काम कररहे हैं। प्रकृति असदाचार और असत्यका संसारमें प्रचार होने देना नहीं चाहती। राजा इस विषयमें उसे सहायता देता है। प्राकृतिक नियमोंका जहां थोड़ाभी उल्लङ्घन हुआ बस दगड तैयार है. वहां दगडसे बचनेका कोई उपाय नहीं है। उस नियम उल्लङ्घनका शरीरपर अथवा मनपर विना प्रभाव पड़े नहीं रहेगा। राजाका नियम कुछ और व्यापक है। प्रकृति केवल एक मनुष्यके सुख दुःखपर ध्यान रखती है। पर राजाको अपने राष्ट्रका ध्यान रखकर नियम वनाने पड़ते हैं। वह मनुष्योंके विशेष सदाचारोंपर भी ध्यान देता है। इन्हीं वातोंके लक्ष्य करके वह क़ानून वनाता है और उस क़ानूनको लोग तोड़ने न पावें इसकी व्यवस्था करता है। अव वतलाओ यदि दुर्जनता और असत्यतासे संसारका कल्याण होता तो राजा उसके लिए दगडकी व्यवस्था क्यों करता। यदि वैसी वात होती तो उचित यह था कि राजा उन्हीं वातोंका प्रचार करे। राजा संसारका कल्याण चाहता है, इसीलिए वह राजा वना है। पर वह असज्जनता और असत्यताका प्रचार नहीं चाहता। प्रचार चाहनेकी वात तो दूरकी है वह इन वातोंके लिए कड़े उपायों-का अवलम्बन करता है, जो राजनियम नहीं मानता उसको दगिडत करता है। यह प्रतिदिन होनेवाली वात है। तुम लोगभी इन वातोंको जानते हो। तुम लोगोंने भी इन वातोंको देखा होगा। तव तुमको सीधे मार्गसे चलना चाहिए। क्योंकि वह निरापद और कल्याणप्रद है। जो तुमको उल्टे मार्गपर चलनेका उपदेश देते हैं वे तुम्हारे शत्रु हैं, वे तुमको प्रकृतिका विरोधी वनाना चाहते हैं, राजाके आज्ञाओंका उल्लङ्घन करके

दण्डनीय वनाना चाहते है। अतएव इस भयानक मार्गपर न चलो, विनयी वनो और विश्वसे प्रेम करो।

ऊपर कहा गया है कि स्वयं सत्कार्य सदाचार सद्विवेक आदिका अनुष्ठान करना और दूसरोंसे भी इनके पालन कराने का प्रयत्न करना विश्वप्रेम है। इन वातोंके साथही कुछ और भी वातें हैं जो विश्वप्रेमके अन्तर्गत समझी जासकती हैं। उनमें प्रधान है अपने सहयोगियोंकी आवश्यकताओंकी पूर्त्ति करना। संसारके मनुष्य तुम्हारे वन्धु हैं। तुमसे उनका सम्बन्ध है, तुमभी मनुष्य हो और वेभी मनुष्य हैं। तुम दोनों-की जाति एक है, तुम्हारा एक खून है, एक उद्देश्य है। यदि किसी कारणवश कोई तुम्हारा भाई इस समय कष्ट में है, तव तुमको चाहिए कि तुम उसकी सहायता करो, वह जिस परि-स्थितिके कारण दुःख पारहा है उसे हटाओ। जितनी शक्ति तुम्हारे पास हो उतनी शक्ति लगादो, यदि उसके दुःख हटाने के लिए तुम्हारे पास पर्याप्त शक्ति नहीं है, तो उसको वढ़ाओ उसको वलवान् वनाओ। अपने दूसरे भाइयोंकी शक्तिसे अपनी शक्ति मिलालो और उसे वलवान् वनालो। तुम अपने उन भाइयोंसे—जिनकी स्थिति अच्छी है—कहो कि वे तुम्हारे इस काममें सहायता करें। ऐसा करनेसे दो लाभ होंगे, एक तो तुम्हारी शक्ति वलवती और शक्तिशालिनी होजायगी, तुम अपने दुःखी भाईके दुःखोंको दूर करसकोगे, दूसरे तुम्हारे इस उदाहरणसे कुछ अन्य मनुष्यभी विश्वप्रेम करना सीखेंगे। इस प्रकार तुमने दुःखियोंको सहायता पहुंचाकर अपने विश्व-प्रेमका परिचय दिया और कुछ मनुष्योंको इस वातका कार्यतः उपदेश देकर विश्वप्रेम परिचय सिखाया।

ये सब बातें छोटी छोटी और प्रारम्भमें निरर्थक मालुम पड़ेगी। पर ये वैसी हैं नहीं। इनसे बड़े बड़े लाभ होते है। ये बातें सिद्धिकी सहायता पहुंचानेवाली है।

कुछ मानुषिक और कुछ प्राकृतिक ऐसी अनेक बाधाएँ हैं जिनके फंदेमे मनुष्योंको फँसनाही पड़ता है। उस समय मनुष्य यदि चाहे कि मैं अपनी शक्तिसे अपनी रक्षा करलूं तो उसका यह भाव प्रशंसनीय अवश्य है और बहुतसी आपत्तियोंके समयमें वह अपनी रक्षा आप करभी सकता है पर कतिपय आपत्तियां ऐसी होती हैं जिनमें अपने द्वारा कुछ किये कराये नही होता। उस समयके लिए तो कुछ उपाय करलेना चाहिए, मैं समझता हूं कि आपत्तिके समय तुम किसी दूसरे के घर जाकर सहायता मांगो इसकी अपेक्षा यह कहीं अच्छा होगा कि सहायता देनेवाला स्वयं तुम्हारे यहां आवे और तुम्हारी सहायता करे। ऐसा होना तभी सम्भव है कि जब आपत्तिके समय तुम दूसरोंकी सहायता किये रहोगे। आपत्तिके समय तुम जिसकी सहायता करोगे तुम्हारी आपत्तिके समय वह कभी बैठा नही रहसकता। वह आवेगा अपना कर्तव्य समझकर, वह आवेगा ऋण चुकाने, यदि ये सब बाते नभी हों तोभी उसे लोक लज्जा धर दबावेगी और वह दौड़कर तुम्हारे पास आवेगा। अतएव अपने बन्धुओंकी सहायता करनेसे कभी मत चूको। तैयार रहो, तैयार रहो, यह तुम्हारा कर्तव्य है, तुम्हारा परम धर्म है, यह लोक और परलोक दोनोंमें सहायता करनेवाला तुम्हारा प्रियसखा है॥

सन्तोष परिश्रम और प्रलोभनोंसे बचना।

हिन्दु जाति अपने सन्तोषके लिए प्रसिद्ध है। पहले के विद्वानोंने सन्तोष धारण करनेका उपदेश दिया है। ब्राह्मणोंके लिए सन्तुष्ट रहना बड़ा आवश्यक बतलाया गया है और साथही वह राजाओंके लिए दोषभी समझा गया है। आप लोगोंको मालुम है कि इस अच्छे और लाभकारी उपदेशसे आज हमारी कितनी हानि हुई है। पात्रके गुणसे अमृतका काम करनेवाली दवाभी आज हमारे लिए विषका काम कररही है। सन्तोषको गुण बतलानेवालोंने सोचा होगा कि असन्तोषकी अग्नि प्रज्वलित होनेसे मनुष्यका हृदय और मस्तिष्क व्याकुल होजाता है, उससे कुछ करते नहीं बनता, वह चाहता है कि जल्दी फल मिले, फल पानेकी उसकी उत्कण्ठा इतनी बढ़जाती है कि व्यापारकी ओर ध्यान देनेका उसे अवसरही नहीं मिलता। कभी कभी तो असन्तोषी मनुष्य एक कामको प्रारंभ करता है, अभी वह काम सिद्धभी नहीं हुआ इतनेहीमे वह लोभके वशवर्त्ती होकर दूसरा काम छेड बैठता है। अब नतो पहलेही कामको सिद्ध करसकता और न दूसरेही कामको। उसकी दशा होजाती है इधरका रहा न उधरका रहा वाली। इसलिए उन कर्मतत्व जाननेवाले विद्वानोंने उपदेश दिया कि भाई अपनी परिस्थितिसे सन्तुष्ट रहो, सन्तुष्ट रहनेपर तुम्हारा हृदयभी शान्त रहेगा, तुमको काम करनेका उत्साह उत्पन्न होगा और अच्छी अच्छी बातें सदा सूझा करेंगी। पर इसका फल आज हम उलटा देखरहे हैं। लोग इस उपदेशका अनुचित अर्थ लगाते और उससे अनुचित लाभ उठारहे हैं। लोग सन्तोषका अर्थ समझते हैं

यदृच्छालाभसन्तोष। जो मिल जाय, जो कोई दे दे, बस, उसीपर सन्तोष करो अधिकके लिए प्रयत्न मत करो। इस समझने जातिकी जो हानि की है उसका वर्णन किन शब्दोंमें कियाजाय। आज हमलोग आलसके जो देवता बने बैठे हैं उसका कारण क्या है, आज देशमें अकर्मण्यताका जो ताण्डव नृत्य होरहा है उसका कारण क्या है। आज हमारी जातिके लोग दीन होकर इधर उधर मारे मारे फिरते हैं इसका कारण क्या है। आपने विचारा है, यदि नहीं तो शीघ्रता कीजिए। इन बुराइयोंके कारणोंको शीघ्रही दूर होजाना चाहिए। मेरी समझसे इन बुराइयोंका कारण है सन्तोषकी अधिकता और उसका दुरूपयोग। सन्तोषका यह अर्थ नहीं है कि हाथपर हाथ धरे बैठे रहो। सन्तोषका अर्थ है तुष्टि, प्रसन्नता, तुमको अपनी स्थितिपर प्रसन्न रहना चाहिए। तुम अपनी स्थिति-पर घृणा मत करो, यदि तुम्हारी परिस्थिति अच्छी नहीं है, तो उसको सुधारनेका प्रयत्न करो।

सन्तोषका अर्थ है सन्तुष्टि, प्रसन्नता, कामकाज छोड़कर बैठना नहीं। सन्तुष्ट रहो, सन्तुष्ट रहकर कामकरो। हाय, हाय, मत करो, लोभमें पड़कर जो काम करने योग्य नहीं हैं उन कामोंको मत करो। एक लोभी मनुष्य असन्तोषके वश-वर्ती होकर किसी मनुष्यकी खुशामद करता है। उसको विश्वास है कि इसकी खुशामदसे मेरे सब काम सिद्ध हो जायंगे। पर क्या होसकता है अथवा होना सम्भव है। खुशामदीका आदर कोई नहीं करता। जिसकी खुशामद कीजाती है वहभी खुशामद करनेवालेको बुरा समझता है। खुशामदीका आदर उसके हृदयमें कुछभी नहीं रहता। पर उसको खुशामद करानेकी आदत है इस कारण वह अपने

खुशामदीको अपने पास तक आने देता है, कभी कभी कुछ देभी देता है, पर कब जब उसको मालुम होजाता है कि अब खुशामदी साहब टरकनेका विचार कररहे हैं। इसी प्रकारकी दशा लोभ और असन्तोषके कारण होती है, इन्हीं बुराइयोंको दूर करनेके लिए हमारे यहांके पंडितोंने सन्तोषका उपदेश दिया। पर अभाग्यवश उसका जो अर्थ समझा गया वह जाति-के जातिका नाश कररहा है। अतएव तुम लोगोंको चाहिए कि सन्तोषका असली अर्थ समझो और उसीके अनुसार काम करो।

जिन दिनों भारतपर वैराग्यका भूत सवार हुआ था जिन दिनों कुछ उन्मत्त मनुष्योंने अपने मनकी बातोंसे संसारका कल्याण होना समझा था, उन्हीं दिनों सन्तोष का अर्थ समझा गया हाथपर हाथ रखकर बैठा रहना। उन लोगोंने काम करनेवालोंकी निन्दा की। वे कहते हैं कि धनके लोभमें पड़कर इधर उधर दौड़नेवालोंको सुख कहां? इस उपदेशका जाति-पर प्रभाव पड़ा। जातिकी जड़मे इस उपदेशने गर्म जलका काम किया। लोगोंने समझलिया कि चुपचाप बैठे रहनेकाही नाम सन्तोष है और सन्तोष करनेवालोंपर भी परमात्माकी कृपा होती है। इस समझके प्रचार होतेही लोग सन्तोषी बनने लगे। बैठे बैठे कुछ दिनोंतक तो परमेश्वरका ध्यान कियागया। पर परमेश्वरको तो ऐसी कोई आवश्यकता नहीं कि वह ऐसे आलसियों और नासमझोंकी सहायता करे, परमेश्वर तो ऐसे मनुष्योंकी आरोग्यताभी नहीं चाहता। परमेश्वर सहायता करता है उनकी, जिनमें बुद्धि होती है, उत्साह होता है, कार्य करनेकी शक्ति होती है। परमेश्वर साथी है विद्वान् और बुद्धिमानोंका, मूर्ख और अलसियोंका

नहीं। सन्तोषके ढोंग रचनेवालोंको पहले तो परमेश्वरका भरोसा था। पर वह भरोसा झूठा निकला। उन्हें तकलीफ़ होनेलगी। तब उन लोगोंने मूर्खोंका दल बनाना प्रारम्भ किया। वे दूसरोंको सन्तोषका महत्व बतलाने लगे और उपदेशका मिहनताना वसूल करनेलगे। इस तरह समस्त देश काहिल आलसी बनगया। देशमें पुरुषत्वका नाश होगया।

एक कथा है कि मूर्ख अमृतका कलश रखकरभी मृत्युके दुःखसे छुटकारा नहीं पाता। उसके लिये अमृत कशलभी मृत्युका कारण होता है। वही बात हमारे देशमें भी मूर्ख उपदेशकोंके उपदेश द्वारा हुई। प्राचीन विद्वानोंने जिस अभिप्रायसे सन्तोषका उपदेश दिया था वह अभिप्रायही इन नये उपदेशकोंने उलट पलट दिये। उन लोगोंके उपदेशका तात्पर्य था किसी काममें तत्पर होनेके उद्देश्यसे, और इन लोगोंने उसका अर्थ लगाया चुपचाप बैठे रहना। इस प्रकार-की मूर्खतासे नासमझीसे जो फल होता है वही हुआ। समूचा देश निकम्मा होगया, कार्यशक्ति जाती रही।

सन्तोषसे कर्तव्यशीलताका उपदेश मिलता है, परिश्रम करनेको शिक्षा मिलती है, आलस्यकी नहीं। जो मनुष्य सन्तोषी है, उसे अपने लिए बहुतही थोड़ी वस्तुओंकी आवश्यकता है। वह अपनी आवश्यकताओंको थोड़ेही परिश्रममें दूर करलेता है। अब उसके पास समय औरभी है। प्रकृतिके नियमानुसार वह चुपचाप बैठा तो रहेगा नहीं उसे कोई न कोई काम अवश्यही करना होगा। अब उसको कोई अच्छा काम अपने लिए निश्चित करलेना चाहिए और उस कामको करनेमें लगजाना चाहिए। इस प्रकार जब उसने अपना कार्यक्रम नियत किया, तब उसकी शक्तियां परिश्रम करनेकी अभ्यासी

बनेंगी, उसके कामोंसे स्वयं वह तथा अन्यभी अनेक मनुष्य लाभ उठावेंगे। जो लोग सन्तोषका दूसरा अर्थ समझते हैं और उसी समझसे काम करना बन्द करदेते हैं केवल वाग्-वीर बनजाते हैं वे अपने अभावों और आवश्यकताओंको सङ्कुचित नहीं करते, वे इतने विशुद्ध मूर्ख है कि इन बातोंको समझतेही नही। आवश्यकताएँ बढ़ीं, कार्यशक्ति बढ़ीही नहीं, परिश्रम करनेका अभ्यास हुआही नही। इन बातोंके साथही उचित रीतिसे अभावोंको दूर करनेका उपायभी नहीं रहा। अब वे अनुचित मार्गोंके अवलम्बनसे अपने अभावोंको दूर करनेका प्रयत्न करेंगे। उनके साथी सङ्गी और उनको अच्छा समझनेवालेभी उसी मार्गका अवलम्बन करेंगे। इस प्रकार देशमे अनाचारियोंका एक दल तैयार होजायगा। अनाचारका प्रचार होगा सत्कर्मका नाश होगा। सरकारका बहुतसा रुपया कैदियोंको खिलानेमें बरबाद होगा।

क्या आपको विश्वास है कि संसारका कोईभी भला आदमी इस प्रकारका उपदेश देगा जिससे देश और समाज दुराचारी बनजाय। नही, तब सन्तोषके असली अर्थके अनुसार काम क्यों नहीं करते। सन्तोषी बनो, स्वार्थी मत बनो। अपने स्वार्थके लिए दूसरोंको नीचे न गिराओ। स्वार्थ-के लिए चित्तको दुःखी मत बनाओ, व्याकुल मत होओ। जो कुछ करो सन्तुष्ट होकर करो, प्रसन्नतापूर्वक काममें लगजाओ। तुमने अपने स्वार्थोंके विषयमे सन्तुष्ट होकर जो अधिक समय बचाया है, उसको कलहमें अथवा दुर्व्यसनोंमें न बिताओ। उसको अच्छे कामोंमें लगाओ, बुरे कामोंमें अपनी शक्ति लगा-कर स्वयं और अपने साथियोंको नष्ट न करो। तुम्हारा बल-

शक्ति और शास्त्र तुम्हारी रक्षाके लिए होना चाहिए। नाशके लिए नहीं। तुम सन्तोषी हो, सन्तोषपूर्वक परिश्रम करो।

संसारमें जो बड़े आदमी हुए हैं वे अपने परिश्रमसे, अपने पुरुषार्थसे। तुम्हारी इज़्ज़त प्रतिष्ठा धन जन आदि जो कुछ तुम्हारे पास है, वे सब तुम्हारे परिश्रमके मूल्यमें मिले हैं। इस बातको ध्यानपूर्वक सुनो और समझो।

यह बात तो सभीको मालुम है कि सभीको अपने लिए कुछ न कुछ काम करना पड़ता है और कामके बदलेमें उसे जो कुछ मिलता है उसीसे उसका निर्वाह होता है। मुफ़्त बिना काम कराये कोई एक पैसाभी देना नही चाहता और कुछ लोग ऐसेभी हैं जो लेनाही नहीं चाहते। जैसे देनेवालेको मुफ़्त देना अखरता है उसी प्रकार लेनेवालेके लिए भी वह अप्रतिष्ठाका कारण समझाजाता है या समझाजाना चाहिए। मुफ़्त लेना बुरा समझाजाता है, यदि आप किसीको मुफ़्तखोर कहें वह चट आपपर बिगड़ जायगा और अपनेपर लगेहुए मुफ़्तखोरीका कलङ्क हटानेका प्रयत्न करेगा। उस समय वह कहेगा, मैंने कामकिया उसके बदले दामलिया, मुफ़्त कहां हुआ। मतलब यह हुआ कि उसको जो मिला वह कामके बदले मिला। उसने परिश्रम द्वारा किसीको लाभ पहुंचाया और उसी लाभमेंसे थोड़ासा भाग उसने भी पाया। यह मुफ़्तखोरी नहीं है किन्तु खरी कमाई है।

धन उत्पन्न करनेके साधनोंमें एक परिश्रम है। धन उत्पन्न करनेके लिए मूलधन आदिके साथही परिश्रमकी भी आवश्यकता पड़ती है। किसीके पास मूल धन होता है और किसीके पास परिश्रम, किसी किसीके पास परिश्रम और मूलधन

दोनोंही होते हैं । जिनके पास परिश्रम और मूल धन दोनोंही हैं उनके लिए तो कोई बातही नही । पर जिसके पास केवल मूलधन है परिश्रम नही, वह तबतक धन उत्पन्न नही कर-सकता, जबतक उसे परिश्रम न मिले. अतएव उसे परिश्रम ख़रीदना पड़ता है । वह मूल्य देकर उन लोगोंसे परिश्रम ख़रीदेगा जिनके पास वह है । इस प्रकार दोनोंके काम चलेंगे। जिनके पास मूलधन है, उनको भी पहले परिश्रम करना पड़ा होगा और उसी परिश्रमके मूल्यमें जो कुछ मिला होगा उसको उन्होंने मूलधन बनाया होगा ।

वह मूलधन पुनः परिश्रमके बदलेमें पलट जायगा और फिर वहां जाकर मूलधन बनजायगा । यही इसका क्रम है। इन बातोंसे आपकी समझमें यह बात आगयी होगी कि संसारमें जिस किसीको जो कुछ मिलता है वह उसके परि-श्रमका मूल्य है । अच्छे परिश्रमका अच्छा मूल्य मिलता है और साधारण परिश्रमका साधारण । पर मूल्य मिलनेके लिए परिश्रमकी नितान्त आवश्यकता है, यह बात बिना खटके कही जासकती है ।

किसीने अच्छा काम किया उसको प्रतिष्ठा मिली और साथही धनभी मिला, यह क्या है? यह है उसके अच्छा काम करनेका मूल्य । उसने अच्छा काम करनेके लिए बुद्धि और शरीर द्वारा जो परिश्रम किया था उसीका यह मूल्य है। संसारके बड़े बड़े विद्वानोंने बड़े आदरसे आह्वान किया, अमरीका आदि देशोंसे प्रोफेसर जगदीशचन्द्र बोसको निमंत्रण मिला । वहां जाकर उन्होंने अपने नये खोज लोगोंको समझाये, लोग प्रसन्न हुए, उन लोगोंने प्रो० बोसकी प्रशंसाकी, सर-कारने धन देकर खोज करनेके मार्गको उनके लिए प्रशस्त

कर दिया। यह क्यों? यह इसलिए कि उन्होंने विद्यार्जनमें बड़ा परिश्रम किया था। बड़े परिश्रमसे एक नया तत्व संसारके सामने उपस्थित किया था। उसी परिश्रमके मूल्यमें उन्हें प्रतिष्ठा और धन मिल रहे हैं। इसी प्रकार जिधर आप देखें, जिस बड़े आदमी, जिस धनी विद्वान् और प्रतिष्ठित मनुष्यके पूर्वजीवन घटनाओंकी ओर देखें, वहां सभी जगह इसी सत्य बातका पता लगेगा। ठाकूर रवीन्द्रनाथका नोबल पारितोषिक तथा इसी प्रकारकी अन्य प्रतिष्ठा और धन लाभ उनके परिश्रमकेही फल हैं।

पर दुःख है हम लोग "पश्यन्नपि न पश्यति" के उदाहरण बने हुए हैं। हमलोग देखकरभी नही देखते। हमलोग यदि किसीको धनी देखते हैं, तो, उसके धनी होनेका कारण उसके पूर्वजन्मके दानको मान लेते हैं। चलो छुट्टी हुई। अब हमतो इस जन्ममें धनी नही होसकते क्योंकि पूर्व जन्ममें दिया नहीं, इस जन्ममें देंगे तो आगेके जन्ममें धन मिलेगा। पर दें कहांसे, कुछ हो भी। एकवार मैं बम्बई गया था। प्रोफेसर राममूर्त्तिभी उन दिनों वहां आये हुए थे। एकदिन हम एक धर्मोपदेशकके साथ प्रो० साहबकी व्यायामक्रिया देखने गये। सीकड़ोंका तोड़ना और मोटर आदिके रोकनेकी क्रिया उन्होंने दिखलायीं, छातीपर बड़े बड़े पत्थरके टुकड़ेभी रखेगये। सब देखा। समाप्त होनेपर हमलोग घर चले, रास्तेमें उपदेशकजी से प्रो० साहबके व्यायाम और शारीरिक शक्तिपर बातें होने-लगीं। उपदेशकजी ने कहा, यह सब जादूका तमाशा है। यह सुनकर मुझे हँसी आयी, और मैंने समझा कि उपदेशकजी भी यह हँसीही में कह रहे हैं, पर थोड़ीही देरमें मेरा यह भ्रम जाता रहा। बड़े बड़े श्लोक कवित्त और उदाहरणों द्वारा

उपदेशकजी जादूकी सत्यता प्रमाणित करनेलगे। इनकी बातों-से मुझे अत्यन्त आश्चर्य हुआ। मैंने कहा जादूकी सत्यताका विचार नही है। विचार यह है कि प्रोफेसर साहब जो करते हैं वह क्या जादूके द्वारा करते हैं? और जादू न जाननेवाले ऐसा नही कर सकते। पर उपदेशकजीमें इन बातोंको समझने-की बुद्धि नही थी, यह देख मुझे बड़ा दुःख हुआ। अच्छा, यह तो एक उदाहरण हुआ। पर इसके लिखनेका मतलब यह है कि हमारी जातिमें नासमझी किस प्रकार घुसीहुई है। हमारे यहांके लोगोंकी दृष्टिमें साधारण बातें तो आतीही नहीं, सड़े सड़े कामोंके भी आध्यात्मिक कारण ढूढ़नेमें हमलोग इस समय व्याकुल हैं। अब आपही बतलाइए, यदि किसीके हृदयमे राममूर्त्ति बननेकी अभिलाषा होगी तो वह जादू सीखने जायगा कि व्यायाम करने। क्या इस प्रकारकी समझ-से जातिका कल्याण होसकता है, क्या ये ढंग हैं शारीरिक और मानसिक उन्नतिके। विचार करो, सभी कामोंके अज्ञेय-कारण नहीं होते। प्रायः वे समस्त बातें—जिनको हमें प्रति-दिन आवश्यकता पड़ती है जिनपर हमारे समाज और देशका कल्याण निर्भर है—साधारण कारणोंसेही सिद्ध होती हैं। जादूसे न तो कोई पहलवानही होता है और न गङ्गास्नान करनेसे कोई बी० ए० पासही होता है। गङ्गास्नान किया-जाता है पवित्रताके लिए और पारलौकिक कल्याणके लिए और बी० ए० पासका मार्ग है कालेजमें परिश्रमपूर्वक अध्ययन करना। भ्रमात्मक विश्वासोंको छोड़ो, प्रत्येक कामके लिए अलग अलग कारण हैं और उन कारणों-की सिद्धि स्वयं करनी पड़ती है। स्वयं परिश्रम करके उन कारणोंको अपने अनुकूल करना पड़ता है। अतएव तुमको

८ कि तुम भ्रान्तधारणाओंके वशवर्ती मत होओ, तुम

सब बातोंको ठीक ठीक समझ लो और समझकर परिश्रम करते जाओ उसको कभी मत छोड़ो, परिश्रमको ही सब उन्नतियोंका मूल समझकर उसकी उपासना करो।

सन्तोष और परिश्रमके साथही साथ प्रलोभनोंसे बचनेकी ओर भी ध्यान देना चाहिए प्रलोभनोंमें जो फँसा, सो गया। प्रलोभन और लालच दोनों एकही बात है। लालच बुरीबला होती है। जो लालचमें नहीं फँसा, वह सन्तोषी होसकता है और परिश्रम भी करसकता है। अतएव इससे बचनेकी ओर सदा ध्यान देना चाहिए।

संसारमें तुमको अनेक अनिच्छित हितैषी मिलेंगे, वे तुम्हारी भलाई आवश्यकतासे अधिक करनेके लिए अपनेको तैयार बतलावेंगे, सब तरहसे वे तुम्हारे हित सम्पादन करनेके लिए उतारू दीख पड़ेंगे। अच्छी बात है, ऐसे मनुष्य यदि तुमको मिलते है तो उसमें हानि ही क्या है। पर उनके दिखाये लालचोंसे सदा दूर रहो। जो कुछ होता है परिश्रमसे होता है इस बातको कभी मत भूलो। सीधे मार्गसे चलनेका अभ्यास करो, प्रलोभनोंमें फँसकर कभी टेढ़े मार्गका अवलम्बन मत करो। क्योंकि वह सिद्धिका मार्ग नहीं है। वह नाशका मार्ग है।

प्रलोभन कई तरहके होते हैं। चाहे वे देखनेमें कितनेही सुन्दर और लाभकारी क्यों न मालूम पड़ें, पर उनसे लाभ नहीं हो सकता। कारण मालुमही है। प्रलोभन हृदयकी दुर्बलता आलस्य स्वार्थ और मूर्खतासे उत्पन्न होता है। उससे भलाई-की आशा करना व्यर्थ है। विना शोधी हुई सखिया खाकर जीनेकी आशा शायद कोईभी बुद्धिमान् न करता होगा॥

मितव्यय और अपव्यय।

काम करनेवालोंको शारीरिक, और मानसिक शक्तियोंके अतिरिक्त एक और शक्तिकी आवश्यकता होती है जिसका नाम आर्थिकशक्ति है। धनकी विपुलताको आर्थिकशक्ति कहते हैं। सांसारिक कामोंके लिए धन प्रधान साधन नहीं है, पर वह ऐसाभी नहीं है कि उसकी उपेक्षा कीजाय। उसकी ओर ध्यान ही न दिया जाय। काम करनेवालोंको धनकी भी आवश्यकता पड़ती है, अधिक न सही, पर थोड़ी आवश्यकता अवश्य पड़ती है। अतएव इधरभी ध्यान देना चाहिए।

धन कैसे मिलता है, यह बात सभीको मालुम है। इस पुस्तकमें भी पहले यह बात बतलायी गयी है। परिश्रमसे धन मिलता है। धन परिश्रमका मूल्य है। पर इससे ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जो अधिक परिश्रम करता है और जिसको अधिक धन मिलता है उसीको धनकी विपुलताभी रहती है। धनका मिलना और बात है और उसकी विपुलता और बात है। कितनेही वकील और वारिस्टर ऐसे हैं, जिनकी आमदनी अधिक है, पर वे ऋणसे दबे रहते हैं, और कितनेही साधारण स्थितिके मनुष्य ऐसे हैं, जिनकी आमदनी थोड़ी होनेपरभी वे कुछ थोड़े बहुत धनके स्वामी हैं। कहनेका तात्पर्य यह है कि धनी होना आमदनी पर निर्भर नहीं है किन्तु उसके उपयोग-की रीतिपर। व्यवस्थापूर्वक यदि धनका उपयोग किया जाय तो अवश्यही उसका कुछ न कुछ हिस्सा बच जायगा। जो आमदनी है, उसमेंसे थोड़ा बचानेका अभ्यास अवश्य करना चाहिए। यह कोई बड़ी बात नहीं है। अपने चित्तपर थोड़ासा अधिकार करने पर अपनी आवश्यकताओंको नियमित करने पर

 कुछ थोड़ा भाग बचने लगजायगा।

दो तरहके मनुष्य प्रायः हमलोग देखते हैं, एक ऐसे होते हैं कि जो कुछ मिला, सब ख़र्च डाला, उतने परभी जब आवश्यकताओंकी पूर्ति नहीं हुई, तब क़र्ज लिया। इस प्रकार प्रतिमास कुछ न कुछ उनको कर्ज लेना पडता है। वे बहुत चाहते हैं अपना कर्ज चुका देना, पर उनके बुते वह चुकता नहीं, वे चाहते हैं कि और आमदनी बढ़े जिससे कर्ज चुके, वे प्रयत्न करके आमदनी बढ़ाते भी हैं, पर उनका ध्यान आवश्यकताओंको कम करनेकी ओर नही जाता। वे अपनी आवश्यकताओंको कम नही कर सकते, वे ज्योंकी त्यों बनी रहती हैं। ऐसी स्थितिमें आमदनी बढ़नेसे भी कुछ लाभ नही होता। आमदनीके अधिक रुपये आये, ख़र्च होगये। बहुत हुआ तो यह कि नया कर्ज नही लिया गया। पुराना जो कर्ज था, वह चुकाया नही जासका और वह सूद दरसूद इतना बढ़ा कि उसकी संख्या सुनतेही घबड़ाहट उत्पन्न होगयी। वह कर्ज चुकाते नही बनता। अन्तमें बड़ी दुर्दशा होजाती है। नालिश हुई डिग्री आदि होनेपर जायदाद नीलाम होजाती है, रहनेवाला मकानतक चला जाता है, दूसरोंके मकानमें किराया देकर रहना पड़ता है। भला बतलाइए, जिस मनुष्यको मकानका किराया न देनेपर अपनी आमदनी काफ़ी नहीं होती थी, उसीको जब किराया देना पड़ा तब भला उसका कैसे निभ सकता है। उसका स्वभाव अपनी बढ़ी हुई आवश्यकताओंका आदी होजाता है, और आमदनी घटने लगती है, मानसिक चिन्ताएँ बढ़ने लगती है, समाजमें बुरी दृष्टिसे देखा जाता है, उसका विश्वासभी कोई नहीं करता। ये दशाएँ उसको शक्तिहीन बना देती हैं।

ऋण लेनेकी आदत बहुत बुरी है। ऋण लेनेवाला कभी भी उससे छुटकारा नही पाता। वह सदाके लिए ऋणी बन

जाता है। उसके सब गुण दब जाते हैं। बार बार उसको झूठ बोलना पडता है। वह कहता है इतने दिनोंमें तुम्हारे रुपये लौटा दूंगा। पर वह उस समयपर लौटा नहीं सकता, क्योंकि वह अपनी प्रकृतिसे विवश है। महाजनको वह समझा बुझाकर अपने अनेक कष्टोंका वर्णनकर विदा करना चाहेगा, पर महाजन रुपया कैसे छोडे, कईबार वह लौट चुका है। अब उसको विश्वास नहीं है कि हमारे रुपये मिल जांयगे। उसको यह विश्वास होजाता है कि ये रुपये देना नहीं चाहता, अतएव वह तरह तरहसे तङ्ग किया करता है, और ऋण लेनेवालेको तङ्ग होना पडता है।

एक मनुष्यने किसीसे ऋण लिया और वह शीघ्र चुका नहीं सका। जबतक वह ऋण चुका न देगा तबतक उसे अपने ऋणदाताके अधीन रहना पडेगा। मानो वह थोडे रुपये लेकर स्वयं बिक गया वह रुपये लौटावेगा, और सूदभी देगा, नगद न सही उसके बदले अपनी जायदाद देगा, पर शीघ्र रुपये लेनेके लिए महाजन तङ्ग न करे इसलिए उसको महाजनके हाथों उतने दिनोंतक बिकना पडेगा, जबतक वह ऋण नहीं चुकाता, उतने दिनोंतक उसे महाजनकी आज्ञाके अनुसार चलना पडेगा, चाहे वह आज्ञा अच्छी हो या बुरी, चाहे वह आज्ञा उसके लिए या उसके समाजके लिए हानिकारीही क्यों न हो, पर उसमें शक्ति नहीं कि वह उस आज्ञाके विरुद्ध चूं तक कर सके। यह सब क्यों, इसलिए कि उसने ऋण लिया है। अतएव तुम प्रयत्न करो, जिससे ऋण लेना न पड़े।

कोई ऋण क्यों करता है? इसलिए कि उसके पास रुपये नहीं है। उसके पास रुपये क्यों नहीं हैं? इसलिए कि वह परिश्रम कम करता है अथवा अधिक ख़र्च करता है। बस,

ऋण लेनेका यही कारण है। यदि किसीको अत्यन्त आवश्यकता आ पड़े, बिना ऋण लिए उसका काम चलना कठिन होजाय, विवश होकर ऋण लेना ही पड़े तो इस बातको नहीं भूलना चाहिए कि वह ऋण है, इसे चुकाना है, इस कारण जहां तक कम होसके उतनाही कम ऋण ले। ऋण लेनेके दूसरेही दिनसे उसे चुकानेका प्रबन्ध करे। स्वयं अधिक परिश्रम करना प्रारम्भ कर दे, अपने खर्चेको घटावे, थोड़ा थोड़ा बचा कर रखे, जितना इकट्ठा हो, उतना महाजनके यहां देता जाय। इस सावधानीसे काम करनेपर ऋणके दुखदायी पंजेसे वह बच सकता है।

तुम कोई नया काम प्रारम्भ करना चाहते हो और उसके लिए तुम्हारे पास रुपयोंकी कमी है। तुम कभी ऋण लेकर उस कामको प्रारम्भ मत करो। यह मार्ग तुम्हारे लिए निष्कण्टक नहीं है, इस मार्गसे चलनेसे तुमको सुख नहीं होगा। ऐसे समयमें तुमको दूसरे मार्गका अवलम्बन करना चाहिए। वह मार्ग है साझीदारोंकी प्रथा। तुम कई साझेदारोंको एकत्रित करलो, सबलोग मिलकर थोड़ा थोड़ा रुपया लगावें, वह रुपया अधिक होजायगा। यदि तुम सब लोगोंने मिलकर परिश्रम उत्साह और सत्यतापूर्वक कामकिया तो लाभभी खूब होगा। यदि किसी कारणवश अधिक लाभ नहीं हुआ तोभी अधिक हानि न होगी। तुम लोग कई साथी हो, सबलोग मिलकर थोड़ा थोडा बाँट लोगे हानिका बोझ हल्का होजायगा। इसी प्रकार चाहे कोईभी अवसर हो, ऋण लेनेका अभ्यास मत डालो।

तुम्हारे घरमें लड़के या लड़कियोंका ब्याह है या इसी प्रकारका कोई और उत्सव है। इस समय बहुत लोग तुम्हारे

पास आवेंगे और तुमको तरह तरहसे उत्तेजित करेंगे, उनकी बातें मत सुनो। वे हुरदंगे हैं और तुमको उत्तेजित करके वे खाना पकाना तथा माल उड़ाना चाहते हैं। इन लफंगोंकी बातोंमें मत आओ। कर्ज लेकर ब्याह आदिमें अधिक ख़र्च करना कोई कीर्तिकी बात नही है। तुम्हारे पास जो हो, उसीमें हिसावसे ख़र्च करो। कर्ज लेकर उत्सव करना अत्यन्त मूर्खता है। बहुत लोग ब्याह सादीमे इतना ख़र्च करदेते हैं कि उसके बादही वे दरिद्र होजाते हैं, धीरे धीरे उनकी ज़ायदाद विकने लगती है। क्या यह इज्ज़तकी बात है। नासमझीसे ख़र्चकर दरिद्र बन जाना, टकेके लिए दूसरोंके सामने हाथ फैलाना कभी प्रतिष्ठाकी बात नहीं कही जासकती।

दूसरे वे हैं जो उतनाभी खर्च नहीं करते, जितना कि अत्यन्त आवश्यक है। वे अत्यन्त कष्ट उठावेंगे पर आवश्यक समय परभी रुपये नही खर्चेंगे। घरके लड़के मूर्ख बन जायंगे पर, फ़ीस देनीपड़ेगी इसलिए उन्हे स्कूल न भेजेंगे, शीतसे शरीर ठण्ढा पड़ता जाता है, पास धनभी है पर वे कपड़े नहीं ख़रीदेंगे, क्योंकि रुपये खर्च होजांयगे। वे रुपयोंके लिए स्वयं होते हैं, रुपये उनके लिए नहीं होते। यह समझ निन्दित है। रुपया टूटा नही और मेरे प्राण गये नहीं ऐसे सिद्धांत रखने वाले संसारके किसीभी कामके योग्य नहीं होते। उनके रुपये होने न होनेसे किसीको कुछ लाभ नहीं। भला, जब उनका रुपया स्वयं उन्हींके काम नहीं आसकता, तब दूसरे उससे लाभ उठावेंगे इसकी क्या आशा कीजाय।

अतएव संसारमें रहनेवालोंके लिए संसारके कार्योंमें सिद्धिप्राप्त करनेके लिए ऊपर लिखेहुए दोनोंही प्रकारके मनुष्य उपयुक्त नहीं हैं। ये दोनोंही मार्ग असुखकर और अनिष्टकर हैं।

धनके विषयमें सिद्धिप्राप्त करनेका उपाय है मितव्यय करना और अपव्ययका रोकना। आवश्यक व्ययको मितव्यय कहते है। उतनाही व्यय करो जितनेकी आवश्यकता है। अमुक मनुष्यके पास ऐसा कपड़ा है तो तुम्हारे पासभी वह वैसाही होना चाहिए इसका अर्थ क्या है। अमुक मनुष्य बंगलेमें रहता है तो तुमभी बंगलेमें रहो इसका कोई हेतु भी तो होना चाहिए। कोई घरमें गाड़ी घोड़ा रखता है तो तुमभी रखो यह कोई बात नहीं है। हठीली और परिणाम भयङ्करी सभ्यताके प्रलोभनोंमें फँसकर अपव्यय मत करो। अपनी आमदनीका विचार कर लो और उसीके अनुसार खर्च करो। सभ्यताकी रक्षाके लिए कर्ज करना और अपनी आत्मा स्वाधीनता तथा मानवीय गुणों तक बेंचदेना क्या इज्ज़तकी बात है, क्या सन्तोषकी बात है? हां तुम जिस समाजमें रहते-हो उस समाजके अनुकूल खर्च करना तुम्हारे लिए आवश्यक बतलाया जायगा। पर तुमको स्वयं अपनी आमदनीपर ध्यान रखना चाहिए। इस विषयमें एक संस्कृत श्लोक सदा स्मरण रखना चाहिए और उसीके अनुसार काम करना चाहिए। वह श्लोक यह है:—

> इदमेव हि पाण्डित्यमियमेव विदग्धता।
> अयमेव परो धर्मो लाभात् स्वल्पतरो व्ययः॥

यही विद्वत्ता है यही चतुरता है और यही परमधर्म है जो कि आमदनीकी अपेक्षा थोड़ा खर्च करना।

इस बातको स्मरण रखकर काम करनेवाले कभी भी हताश या दुःखी न होंगे॥

सहयोगिता ।

कल्याणप्राप्त करनेके लिए यह बड़ी अच्छी नीति है कि आपसमें एक दूसरेकी सहायता कीजाय। हम यदि किसीकी सहायता करेंगे तो अवश्यही उसके बदलेमे हमको दूसरेकी सहायता मिलेगी। हम यदि दूसरेकी भलाई सोचेंगे तो अवश्यही हमारी भलाई दूसरा सोचेगा। यही प्रकृतिका नियम है और यही मनुष्यका स्वभाव है।

मनुष्यके स्वार्थ कई प्रकारके होते हैं। कतिपय स्वार्थ उसके ऐसे होते हैं. जो उसके व्यक्तित्वसे सम्बन्ध रखते हैं और कतिपय स्वार्थ ऐसे होते हैं जिनका सम्बन्ध उसके समाजसे होता है और सामजके द्वारा उससे भी होता है। व्यक्तित्वसे सम्बन्ध रखनेवाले स्वार्थ और समाजके द्वारा व्यक्तित्वसे 'सम्बन्ध रखनेवाले स्वार्थ ये दोनोंही समान हैं। इन दोनोंकी सहायताकी आवश्यकता है। मान लो, एक मनुष्य है, वह अपने समाजमें विद्याका प्रचार करना चाहता है, तुमने उसको सहायता दी। तुम्हारी सहायतासे उसका काम सिद्ध होगया। वह जिस प्रकार चाहता था. उसी प्रकार उसके समाजमें शिक्षाका प्रचार होगया। जब तुम अपने समाजमें किसी बातके प्रचारके लिए प्रयत्न करोगे, जब तुम अपने समाजको सुखी बनानेके लिए प्रयत्न करोगे, उस समय तुम्हारा वह उपकृत मनुष्य तथा उसका वह समाज तुम्हारी सहायता-के लिए प्रसन्नतासे उद्यत होजायगा। उस समाजको तुम्हारे साथ काम करते बड़ा आनन्द मालुम पड़ेगा। वह समझेगा कि मैं अपना ऋण चुका रहा हूं।

आपसमें मिलकर काम करनेवाली नीति इतनी अच्छी और निरापद है जिसका ठिकाना नहीं है। यह तो सभी भले आदमी जानते हैं कि व्यक्तित्वमें पूणता नहीं है, पूर्णता है समाजमें, कोईभी ऐसा व्यक्ति नहीं जो अपनी आवश्यकताओ तथा अभावोंकी पूर्तिका स्वयं प्रबन्ध कर सके। अतएव उसे समाजके अन्य अङ्गोंसे सहायता लेनी पड़ती है। पर यह स्मरण रखना चाहिए कि समाजका दूसरा अङ्ग तुम्हें सहायता देनेके लिए वाध्य नहीं है, यदि वह तुम्हारी सहायता नभी करे तौभी उसकी कोई हानि नही है, वह दूसरे मनुष्यसे उसे मिलजायगी। उसका काम चल जायगा। अतएव यदि तुम किसी दूसरेसे सहायता पानेकी इच्छा रखते हो तो तुम्हे चाहिए कि तुम दूसरेकी सहायता करो। अपने समाजके दूसरे अङ्गकी अपनी शक्ति और बलके अनुसार सहायता करो। उसका वदला मिलेगा, अवश्य मिलेगा।

संसारके कतिपय निष्कामकर्मी महापुरुषोंको छोड़कर और दूसरे, जो अन्य मनुष्योंकी सहायता करते हैं उसमे वदला मिलनेकी आशा रहती हैं। इस समय मैं अमुक मनुष्यकी सहायता करता हूं वहभी मेरी सहायता करेगा, यहीं इच्छा प्रायः सबकी रहती है। अतएव देखाजाता है कि बड़े बड़े आदमियोंके कामोंमें सहायता करनेके लिए तो ठट्टके ठट्ठ मनुष्य जमा होजाते हैं, पर असहाय मनुष्योंको सहायता मिलनी कठिन होजाती हैं। जो बड़े आदमी धनी हैं, उनके साथी सम्बन्धीभी धनी और बड़े आदमी हैं, वे आपसमें अपना प्रबन्ध करसकते है उन्हें तुम्हारी सहायताकी न तो आवश्यकता है और न अपेक्षाही है। वे तुम्हारी सहायताको सहायता-भी तो नही समझते। तुम उनकी सहायता करते हो और वे

समझते हैं कि यह हमारी खुशामद करता है। क्या उनका ऐसा समझना तुम्हारे मनुष्यत्वके सम्मानमें मज़बूत धक्का लगना नहीं है। फिर उनसे तुम बदला पानेकीही आशा क्या कर सकते हो। धनी होनेसेही तुम्हारी कोई अधिक सहायता करेगा यह बात नहीं है। जो तुमको खुशामदी समझता है वह तुम्हारी क्या सहायता कर सकता है। वह तुम्हारी सहायताको अपना प्राप्य हक़ समझता है, बतलाओ, यह तुम्हारे लिए ठीक है? अतएव तुमको किसीकी सहायता करनेके पहले इस बातका भी विचार कर लेना चाहिए कि जिसको तुम सहायता देना चाहते हो वह इसका पात्र है कि नहीं, उसको तुम्हारी सहायताकी आवश्यकता है कि नहीं, तुम्हारी दीहुई सहायताका मूल्य उसकी दृष्टिमें क्या होगा, इन बातों-पर विचार करना आवश्यक है। ऐसा नहो कि तुम्हारी दीहुई सहायता अनर्थक हो। तुम सहायता करो उसकी, जिसे तुम्हारी सहायता अपेक्षित हो, यह न समझो कि वह दरिद्र है निर्बल है, उससे प्रतिफल क्या मिलेगा। यदि तुमने अपनी सहायतासे एक शुद्ध निर्विकार और अविचल हृदय अपने वशमें कर लिया तो क्या यह कम है? क्या तुम्हारी सहायता-का बदला तुम्हें नहीं मिला। तुम्हारी सहायताके बदले समाजके उस अङ्गके हृदयमें तुम सम्मानके अधिकारी हुए हो, जो सच्चा हृदय है, क्या यह बदला कम है। क्या तुम इससे असन्तुष्ट हो और खुशामदी बननेसे सन्तुष्ट। नहीं तुमको ऐसा नहीं बनना चाहिए, यदि तुम्हारी ऐसी इच्छा होभी तो उसे दूर कर देना चाहिए। हम तुमको सलाह देते हैं यदि तुमको निर्विकार शुद्ध और अविचल हृदय थोड़ी सहायताके बदले मिलता हो तो ले लो, सौदा सस्ता है, देर मत करो।

परस्पर भावनाकी रीतिसे बड़े बड़े काम सिद्ध होते हैं, परस्पर भावनामें बहुत बल होता है, साधारण स्थितिके मनुष्योंमें इस गुणका प्रचार होना उनके अत्यन्त कल्याणकी बात है। शहरोंकी बात जाने दीजिए। इस समय शहरोंमें हठीली सभ्यताका प्रचार होरहा है। पास पास दो बंगलोंमें रहनेवाले एक दूसरेका नाम तक नही जानते। फिर यहां सहयोग या परस्पर भावनाकी रीतिका प्रचार कैसे होसकता है। पर गांवोंमें इस रीतिका प्रचार है और वहांवाले इससे लाभभी उठाते है। एक गांवमे जितने मनुष्य रहते हैं, उनका आपसमें एक कुटुम्बका सा सम्बन्ध रहता है, एककी हानिको समस्त गांववाले अपनी हानि समझते है, एकके लाभसे सभी गांववाले प्रसन्न होते हे। गांवका कोई मनुष्य बीमार पड़ा सभी गांववाले उसकी सेवा शुश्रूषामें लग गये, एक घरमें आग-लगी, समूचा गांव पहुंच गया और उसको शीघ्रही बुझानेका प्रयत्न करनेलगा। इस प्रकार आपसमें एक दूसरेकी सहायता करते हुए वे अत्यन्त बलवान् बन जाते है, वे स्वर्गीय सुखका अनुभव करते है। अतएव इसकी उपयोगिता समझकर इसका प्रचार करना चाहिए, इसका स्वयं उदाहरण बनकर लोगोंको इसके लाभ समझाने चाहिए। इस रीतिसे अलग अलग बिखरी हुई शक्तियां आपसमें मिलती है, छोटे छोटे अनेक भागोंमें फैले हृदय जुड़ते हैं, जुड़कर वे महान् हृदयका रूप धारण करते हैं।

सहयोगकी प्रथाही चेतनताका चिन्ह है। जिसमें चेतनता का जितना अधिक विकाश है, वह उतनाही अधिक सहयोगका महत्व समझेगा, वह उतनाही इस उपयोगी गुणका अभ्यास

और प्रचार करेगा । हम तो उनको अचेतन समझते हैं, जिनमें सहयोगका महत्व नहीं है, जो सहयोगके अवलम्बनसे अपने-को बचानेके लिए अपनी सारी योग्यता और बुद्धिमानी ख़र्चनेके लिए तैयार दीख पड़ते हैं।

सहयोगिता एक दृढ़ पञ्जर है, जो समाज और व्यक्तियोंकी बड़ी दृढ़तासे रक्षा करता है । तुमने यदि अपने समाजकी सहयोगिता प्राप्त करली है तो तुमको सिद्धिका पानाभी विशेष कठिन न होगा ; क्योंकि तुमको सहयोगिताका बल प्राप्त है, तुम उस बलसे बलवान् हुए हो जो अजेय है, तुमको वह शक्ति प्राप्त हुई है जो कार्यसाधिका है । अतएव अवसर मिलतेही उनकी सहायता करो जो तुम्हारी सहायता चाहते हैं, अवसर मत चूको; थोड़ी सहायता देकर अपने लिए सह-योगी हृदय तैयार कर लो ।

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो अपनेको बहुत बड़ा बुद्धिमान समझते हैं । उन्हें अपनी बुद्धिका बड़ा घमंड है । वे समझते हैं कि मेरी चालें किसीकी समझहीमें न आवेंगी । इसी आशा-से सभीको सहायताका बचन दे दिया करते हैं । किसी किसी अवसरमें वादी प्रतिवादी दोनोंही उनके यहां सहायताकी आशासे पहुंचते हैं । वेभी दोनोंसे सहायता करनेकी प्रतिज्ञा करते हैं । उनकी बातें बहुत बढ़ी चढ़ी होती हैं । पर वे सहायता किसीकी भी नहीं करते हैं । किन्तु दोनोंहीसे अपना स्वार्थ—यदि होसका तो—साधते हैं । वे हैं अधम स्वार्थी और विश्वासघाती । तुम ऐसे पापिष्ठोंको अपना आदर्श मत बनाओ । तुम ऐसे पिशाचोंके पैशाचिक गुणसे अपनेको अलग रखो । वे हैं परमात्माकी सृष्टिके बदबूदार कांटे । उनकी ओर

देखो मत। थोड़ेही दिनोंमें उनकी वदवू फैलेगी और दुनिया भागकर उनसे अपना पिण्ड छुड़ावेगी। जो दोचार वदवूके आदी मूर्ख वहां रह जांय तो रहने दो। इससे कोई हानि नहीं क्योंकि वे उस वदवूदार कांटेकी पताका हैं, उनके रहनेसे ही वह पहचाना जायगा। अतएव तुमको ऐसे आदमियोंका कभी साथ न करना चाहिए, ऐसोंसे सहायताकी आशाही नहीं करनी चाहिए।

तुम किसीको सहायता देना चाहते हो अथवा तुमसे कोई सहायता मांगता है, उस समय तुमको इस वातपर विचार कर लेना चाहिए कि तुम वह सहायता दे सकते हो कि नहीं, वैसी सहायता देनेकी तुममें शक्ति है कि नहीं। कभी ऐसा न करना कि झूठमूठ किसीसे सहायता देनेको हां करदो, और अवसर आनेपर फिस्स, यदि ऐसा करोगे तो तुम लोगोंकी दृष्टिसे गिर जाओगे। उस समय तुमको विश्वास-घातके पापसे पापी वनना पड़ेगा। तुम थोड़ेसे अहङ्कारमे आकर लोगोंको अनर्थक अपना शत्रु वना लोगे। अतएव यदि तुम सहायता देना चाहतेहो दो, न देना चाहतेहो अथवा देनेकी अपनी शक्ति नहीं देखते तो साफ साफ कहदो। वतला दो कि भाई तुम अपने इस कामके लिए कोई और दूसरा प्रयत्न करो। यदि तुमसे वन पड़े, यदि तुम्हारी वुद्धिमें आवे तो उनको मार्गभी वतला दो, उनसे कहदो कि इस मार्गसे चलनेसे तुम्हारा कल्याण होगा, तुम्हें सहायता मिलजायगी। तुमको जो कुछ कहना हो साफ साफ कह दो, विश्वासघात मत करो, किसीको धोखा मत दो। ऐसा करना सहयोगिताका नाश करना तो है ही, साथही अपने मनुष्य होनेसेभी त्यागपत्र

लिखना है। क्या यह मनुष्यका काम है कि अपने यहां आये हुए मनुष्यका काम न तो स्वयं करना और न दूसरोंसे करानेके लिए उसे मौक़ा देना। क्या तुम्हारा विवेक तुमको ऐसा करनेकी आज्ञा देता है। यदि वह आज्ञा देता हो तो तुमको समझना चाहिए कि वह विवेक तुम्हारा नहीं है, किन्तु किसी राक्षसका है। उसको दूर हटाओ। अपने हृदयको पवित्र करो। मनुष्यके गुणोंका अभ्यास करो॥

विश्वसनीयता।

यह बात बतलायी जा चुकी है कि मनुष्य अकेला नहीं है। यह समाजमें बंधा हुआ है। इसको कोईभी अधिकार नहीं है कि यह वैसे कामोंको करे जिनसे, समाजकी प्रतिष्ठामें धब्बा आवे और समाजको नुक़सान पहुंचे। समाज चाहता है और उसके लिए यह हितकारक भी है कि उसके प्रत्येक व्यक्ति विश्वासी बनें। उसके प्रत्येक व्यक्तिका व्यवहार कार्य और वचन ऐसे हों, जिनपर किसीको भी अविश्वास करनेका कारण न हो। शुद्ध व्यवहार सरल कार्य और सत्य वचन सदा विश्वासके योग्य हुआ करते हैं। जिनके व्यवहार शुद्ध नही हैं, जिनके कार्य सरल नही हैं और जिनके वचन सत्य नही हैं वे किन गुणोंसे लोगोंका विश्वास अपनेपर करा सकते हैं, यह बात विचार करने योग्य है।

तुम्हारे व्यवहार इतने शुद्ध और स्पष्ट होने चाहिए कि कोईभी उसमें ननु नच न करसके, कोईको भी उसमें अविश्वास करनेका अवसर न हो। विश्वसनीयताही पवित्रता है। जो मनुष्य पवित्र हैं उनपर सभी विश्वास करते हैं। उनके किसी कार्यमें छल प्रपंच नहीं रहता। उनकी वाणी सत्य निकलती है, जो सच्ची बात होती है उसे वे कह देते हैं। वे जो कुछ करते हैं सीधे मार्गसे करते हैं। उनके आचार व्यवहार कार्य वचन आदि किसीमें भी दिखावा नही रहता। उनकी समझसे संसारमें ऐसा कभी भी समय नही आता जब कि असत्य व्यवहार किया जाय। असत्य व्यवहार करना वे अपने लिए अपने मनुष्यत्वके लिए अपने समाज और देशके लिए हानिकारी समझते है। उनकी समझमें छल प्रपंच

करना मनुष्योंका काम नहीं है किन्तु राक्षसों और अधम पिशाचोंका । वे छल कपटको पाप समझते हैं और सत्य व्यवहारको पुण्य, अतएव छल कपटका त्याग करते हैं और पुण्यको ग्रहण करते हैं ।

जिसका व्यवहार सदा शुद्ध और सत्य है, वह सुखी रहता है । उसको कभी भी शत्रुभय नही रहता, उसने किसीकी भी हानि नही की है किसीको भी दुःख नहीं पहुंचाया है, फिर दूसरेही उसको कष्ट क्यों देने लगे । दूसरोंको क्या पड़ी है कि अनर्थक किसी शुद्धाचारीको दुःख पहुंचावें । इसी कारण महात्माओंने शुद्धाचारकी प्रशंसाकी है, इसीसे उन महावीर कर्मयोगियोंने शुद्धाचारको वड़े आग्रहसे देखा है । हमको भी देखना चाहिए, क्योंकि हमभी सिद्धिके अभिलाषी हैं, हमभी संसारमें मनुष्य होकर रहना चाहते हैं । हमभी अपने समाज और देशको सुखी वनाना चाहते हैं ।

सबको यह अधिकार है कि वह अपनी भलाई करे, वह अपनी उन्नति करे, वह अपने अभ्युदके उपाय सोचे । यह अधिकार किसीको भी नही है कि वह दूसरोंको दुःख दे, दूसरोंके मार्गमें कांटा विछावे । तुमको मालुम है कि तुम्हारे असत्य व्यवहार दूसरोंको कितना कष्ट पहुंचाते हैं । असत्य व्यवहार किया ही जाता है दूसरेको कष्ट देनेके लिए । कतिपय स्वार्थी और आलसी मनुष्य झूठ वोलते है, दिखाऊ काम करते हैं, निन्दित मार्गका अवलम्बन करते हैं अपने स्वार्थके लिए । वे आलसी हैं, उनसे पूरा परिश्रम नहीं होता, अतएव उनकी पाशविक प्रवृत्ति जाग खड़ी होजाती है, और वे अपने असत्य वचनों तथा असत्य व्यवहारोंसे लोगोंको दुःख पहुंचाते हैं और उससे स्वयं लाभान्वित होनेकी आशा करते हैं । भला सोचो,

यहभी कोई बात है, तुम अपनी एक बुरी आदतकी रक्षाके लिए संसारके सज्जनोंको क्यों दुःख देतेहो। तुम खुद परिश्रम करो, मुफ़्त क्यों खाना चाहते हो। तुम अपने दुर्गुणोंका फल भोगो, औरोंको तुम दुःखी क्यों बनातेहो। तुम्हारी यह बात थोड़ेही दिनोंके लिए है। जब लोगोंको मालुम होजायगा कि तुम्हारा व्यवहार शुद्ध नही है, तुम्हारी बातें सत्य नहीं हैं उस समय तुम घृणाके पात्र समझे जाओगे, तुम्हारी सब चालाकी चकनाचूर हो जायगी।

बहुतोंका यह स्वभाव होजाता है कि वे कभी भी सीधे मार्गसे नही चलते। छोटी छोटी बातोंके लिएभी वे पैतरे बदला करते हैं। वे अपनेको बड़ाही सावधान और बुद्धिमान् समझते हैं। वे अपनी विद्याके सामने बृहस्पतिको और शक्तिके सामने इन्द्रको भी छोटा समझते हैं। उनकी यह समझ मूर्खताके कारण है इस बातके बतलानेकी तो कोई आवश्यकता है ही नही, क्योंकि ऐसी समझवालोंको प्रायः सभी मूर्ख समझते हैं। वह मनुष्य अपनी इसी समझके कारण दुरदुर होजाता है। वह समाजमें घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता है, सज्जनोंके समाजमें दुनकारा जाता है। तब वह अन्धकार देखता है, पर अपनी प्रचण्ड मूर्खताके कारण वह उस समयभी सम्भल नहीं सकता, उसका अहङ्कार उसको मिट्टीमें मिला देता है। वह अपने छिछोरेपनकी चालोंसे बुद्धिमान मनुष्योंको अपने फन्देमें फाँसना चाहता है, वह अपनी गुण्डईकी करामातोंसे सदाचारियोंपर भी हावी होना चाहता है। पर ये सब बातें उसकी मूर्खताकी हैं। इन बातोंके द्वारा वह अपनेको अविश्वासो बनाता है, भगवानके पवित्र संसारमें शैतानी माया फैलाना चाहता है। पर वह हो नहीं सकना।

संसार अन्धा नहीं है और न मूर्खही है, इसको सभी बातें समझनेकी बुद्धि है और यह सभी बातें खूब समझता भी है। यह संसार भगवानके रहनेका स्थान है, इसमें असत्य व्यवहार करनेवाले शैतान कभी सफल नहीं हो सकते। दैवी बलके सामने दानवी मायाकी बिसातही क्या? उसका बलही क्या? खुले मैदान काम करनेवालोंके सामने छिपकर काम करनेवाले कैसे सफल होसकते हैं। सत्यताके सामने असत्यताका मूल्य-ही क्या? अशुद्धाचारको सदाही शुद्धाचारसे नीचा देखना पड़ता है। अतएव क्या ज़रूरत है कि अपने नीच स्वभावके वशवर्ती होकर अपना नाश किया जाय।

हँसी मज़ाकमें भी झूठ मत बोलो, क्योंकि इससे झूठ बोलनेके अभ्यास पड़जानेका भय रहता है। झूठा मनुष्य कभी भी आदरका पात्र नहीं होता, उसपर कोईभी विश्वास नहीं करता। तुम क्या संसारमें अविश्वासी बनकर रहना चाहते हो। क्या तुम समझते हो कि अविश्वासी बनकर रहनेसे तुम्हारा कल्याण होगा। कभी नहीं, झूठ एक तेजाब है जो अन्य समस्त गुणों और शक्तियोंको जला देता है। फिर क्यों इस तेजाबके पास तुम जाते हो, तुमको चाहिए तुम इस भयानक वस्तुसे दूर ही रहो। क्या वह मनुष्य बुद्धिमान समझा जाता है, जो जानबूझकर अपनेको सङ्कटमें फँसाता है। इन बातोंपर ध्यान रखकर बड़ी सावधानीसे अपने व्यवहार और कार्य करने चाहिए, निष्कपट और निर्भय होकर सत्य बचनका आश्रय ग्रहण करना चाहिए।

आजकल लोगोंमें यह प्रवृत्ति देखीजाती है कि वे न्याय अन्यायकी कुछभी परवा नहीं करते, मनमाने अत्याचार करते हैं। जब उस अत्याचारका बदला उन्हें मिलने लगता है, राज-

दण्ड या समाजदण्ड भोगनेका जब अवसर आता है तब वे एक चालाकीसे काम लेते हैं। वे कुछ रुपया अधिकारियों तथा समाजपतियोंको देकर बचना चाहते हैं। अनेक स्थानोंमें इस उपायसे काम भी होजाता है। तत्काल उनकी रक्षा होजाती है। पर परिणाम अत्यन्तही भयानक होता है। एकके लिए नहीं दोनोंके लिए। दोनोंही अन्यायी और अविश्वासी समझे जाते हैं। साधारण लोभमें फँसकर वे दोनोंही अपना विश्वास जैसा रत्न खो बैठते हैं। अब कोई विश्वास क्यों करेगा, लोग समझेंगे कि यह तो रुपये पर न्याय बेचता है, इसकी दृष्टिमें सत्य और न्यायका मूल्य रुपयेके मूल्यकी अपेक्षा बहुतही थोड़ा है। बतलाइए किसीके विषयमें लोगोंकी ऐसी धारणा होना क्या लाभकारी है, क्या तुम इस प्रकारकी बातोंको पसन्द करतेहो।

क्या इस बातको कोई आवश्यकता है कि तुम लोगोंपर अत्याचार करो, क्या तुमको अधिकार है कि अपने दुलारे मनकी प्रसन्नताके लिए दूसरोंको सताओ। यदि तुम्हारी समझमें इस बातकी आवश्यकता है तो साथही इस बातकी भी आवश्यकता है कि तुम अपने कियेका दण्ड भोगो। अरे भाई, जो भोजन करता है उसीको पचानाभी पड़ता है। तुम पान खातेहो तो तुम्हाराही मुंहभी लाल होगा। तुमने अत्याचार किया, अन्याय किया उसका फल कौन भोगेगा, न्यायसे तो तुम्ही उस फलके अधिकारी हो। फिर क्यों तुम दूसरेको भी रुपयेके लोभसे अपने अत्याचारी और अन्यायी कीचड़में फँसाना चाहते हो। कभी मत ऐसा करो। एक पाप करके औरभी अनेक पाप करनेकी प्रवृत्ति कभी भी अच्छी नहीं कही जा सकती है।

अच्छा वह दुर्बल है, उसका मन दुलारा है, इसी कारण वह अन्याय करता है अत्याचार करता है और उसके बदले दण्ड भोगनेसे डरता है। वह पापी है उसके लिए पाप करना कोई बड़ी बात नहीं है। पर हे समाजपति महाशय, हे अधिकारीवर्ग, तुम क्यों पाप करते हो। तुम अपने कर्तव्योंको अपने न्याय और सत्यको रुपयेपर क्यों बेचते हो। क्यों नहीं साफ साफ कहदेते कि मैं मनुष्य हूं, मुझमें मनुष्यत्व है। मैं रुपयेके कारण सच्ची बातको छिपा नहीं सकता। मैं रुपयेपर अपना सत्य नहीं बेच सकता। जब तुम इस प्रकार सच्ची बातें कहनेके लिए तैयार होओगे उस समय तुमपर तरह तरहके अनुचित दबाव डाले जायंगे, उस समय तुमको धमकियां दी जायँगी। पर तुमको उस समय विचलित नही होना चाहिए, धीरतापूर्वक काम करना चाहिए। डरनेकी ज़रूरत नहीं है। तुम सत्यके पक्षपर हो, तुम्हारी बुराई कोईभी नही कर सकता। उन अन्यायी अत्याचारी निर्बलोंके बुते कुछ-भी नही हो सकेगा। क्योंकि वे पापी हैं अतएव निर्बल हैं।

तुम किसीभी प्रकारकी सिद्धिके अभिलाषी क्यों न हो, पर तुम्हारे लिए विश्वसनीय होना अत्यन्त आवश्यक है। तुम नौकर हो तुमको विश्वसनीय होना चाहिए, तुम दूकानदार हो तुमको विश्वसनीय होना चाहिए, तुम ज़मीदार हो तुमको विश्वसनीय होना चाहिए। यदि तुमपर मालिकका विश्वास न रहेगा तो क्या वह कभी तुमको अपने पास रखेगा। यदि तुम्हारे ग्राहकोंका तुमपर विश्वास नही होगा, तो वे क्यों तुम्हारी दूकानपर आवेंगे, यदि तुम्हारी प्रजाका तुम्हारे कर्म-चारियोंका तुमपर विश्वास न होगा तो बतलाओ उनके शासनमें तुमको कितनी कठिनाई उठानी पड़ेगी। क्या उनका

स्वाभाविक प्रेम तुम पर होसकता है जब प्रेम नहीं है तो तुम्हारा कर्तव्य मार्ग कितना कण्टकित हो जायगा। तुम्हारी इज्ज़त प्रतिष्ठा पदमर्यादा आदिका गौरव कुछभी नहीं रह-जायगा, तुमको एक साधारणसे साधारण मनुष्यके सामनेभी नीचा देखना पड़ेगा। यह सब क्यों कुछ मालुम है? इसका कारण है अविश्वसनीयता। लोग तुमपर विश्वास नहीं करते, इसलिए वे तुमपर घृणा करते हैं। तुम मालिक हो, अपनी प्रजाका मुंह बन्द करसकते हो पर उसके हृदयपर तुम्हारा कुछभी अधिकार नहीं है। वे तुम्हारे सामने तुम्हारा आदर करेंगे क्योंकि वे तुमसे डरते हैं, पर उनके हृदयमें तुम्हारी कुछभी प्रतिष्ठा नहीं है। यह दशा किसीभी जमींदारके लिए कल्याणकारक नहीं है, ऐसी दशामें कोईभी जमींदार अपने काममें सफल नहीं होसकता।

हमारे महल्लेमें एक बनिया रहता है, वह परले सिरेका झूठा है, जो चीज़ और जगह तीन आने सेर बिकती है, वही चीज़ उसकी दूकानपर दस पैसे सेरके भावसे बिकती है। पर न मालुम वह कैसे तौलता है कि दसपैसेकी चीज़ सातही आठ पैसेकी रह जाती है, इसी प्रकारके औरभी वह कलाबाजी करता है, कुछ दिनोंतक तो उसकी दूकान चली, आमदनीभी खूब हुई, पर जब लोगोंको मालुम हुआ कि उसका स्वरूप क्या है, वह कितना बेईमान है तब उसके ग्राहक टूटने लगे। अब वह भर दिन चुपचाप घरपर बैठ रहता है। सबेरेसे सन्ध्या तक बहुत कमही मनुष्य उसकी दूकानपर जाते हैं। इसका कारण केवल यही है कि उसने अपने परसे लोगोंका विश्वास हटा दिया है।

आज जो बड़ी बड़ी वेङ्कें खड़ी हुई हैं, ये जो बड़ी बड़ी दूकानें दीख पड़ती हैं, ये जो बड़े बड़े कारख़ाने चल रहे हैं, क्या तुम जानतेहो उनकी नींव क्या है। क्या तुमको मालुम है कि एक आदमीके विश्वासपर लोगोंने लाखों किरोड़ों रुपये दे दिये है। ये बेङ्कें किसी एककी सम्पत्ति नहीं हैं। इनमें वहुतसे मनुष्योंके रुपये जमा हैं। लोग अपने घरमें रुपये रखनेमें डरते हैं, उनको सन्देह रहता है कि मेरे रुपये कोई चुरा न ले। पर वे वेङ्कोंमें उन्हें सुरक्षित समझते हैं। यह सब क्यों? इसलिए न कि बेङ्कवालोंने अपनेको विश्वासपात्र बनाया है। देखतेहो विश्वासके द्वारा ये कितने बड़े बड़े कार्य होरहे हैं, देखतेहो कि विश्वासपर लाखों किरोड़ोंका व्यापार होरहा है। फिर तुम अपने विश्वासको मिट्टीके मोल क्यों बेंचते हो। तुमको भी तो उचित है कि अपनेको विश्वासपात्र बनाओ और उससे लाभ उठाओ।

यदि तुम विश्वासी हो यदि लोग तुमपर विश्वास करने लगें तो समझो तुम्हारी सिद्धिका मार्ग प्रशस्त होगया। तुमने आपत्तिके समय दूसरोंसे सहायता पानेके योग्य अपनेको वना लिया। अतएव जो करो शुद्धता और सत्यतापूर्वक करो, जो वोलो सत्य बोलो। चाहे कैसाभी कठिन समय क्यों न हो तुमको चाहिए कि सत्यका ही आश्रय ग्रहण करो। तुमको यह बात सदा स्मरण रखनी चाहिए कि किसीभी कार्यकी सिद्धि सत्यकी प्रतिष्ठा करनेसेही होती है। सत्यधर्मका प्रधान अङ्ग है, और वही विश्वसनीयताका मूल है। विना सत्याचरण किये, विना सत्यकी आराधना किये कोईभी विश्वासपत्र नहीं होसकता यह वात निश्चित है॥

व्यवहार ।

यह बतलाया गया है कि विश्वप्रेम और विनय सिद्धि पानेके साधन हैं। इसी सम्बन्धकी कुछ और बातें यहां बतलायी जायंगी । तुम्हारे प्रत्येक व्यवहारसे विश्वप्रेम और विनय सूचित होना चाहिए। तुमको यह बात सदा स्मरण रखनी चाहिए कि तुम्हारे किसीभी कार्यसे किसीको दु.ख न पहुंचे । तुम किसीके साथभी कठोरता और निर्दयताका व्यवहार मत करो। जिससे मिलो, शुद्ध अन्तःकरणसे मिलो, जिससे बर्ताव करो उससे प्रेमपूर्वक बर्ताव करो। जो दुःखी हैं उनके साथ तुम्हारा व्यवहार दयाका होना चाहिए। सुखियोंसे मित्रताका व्यवहार करो, कोई सुखी है यह देखकर जलो मत, किसीके सुखसे द्वेप मत करो ऐसा करना तुम्हारे हृदयको नीच बनानेवाला होगा, तुम्हारी कार्यशक्तिको क्षीण बनानेवाला होगा। अतएव तुमको चाहिए कि तुम यदि किसीको सुखी देखतेहो तो उसके सुखसे प्रसन्न होओ, उससे मित्रता करो । पुण्यात्माओंको देखकर प्रसन्न होओ, उनकी ख्याति करो उनका आदर्श संसारके सामने रखनेका प्रयत्न करो । इससे संसारको और साथही साथ तुमको भी लाभ होगा। पापियोंकी उपेक्षा करो उनका सम्बन्धही त्याग दो, उनसे अलग रहनेहीमें कल्याण है ।

इस प्रकारके व्यवहारसे तुम्हारा चित्त प्रसन्न होगा, चित्तके प्रसन्न होनेसे कार्यशक्ति तीव्र होती है, हृदय दृढ़ होता है। नयी नयी बातें सूझती हैं सिद्धिप्राप्त करनेमें सहायता प्राप्त होती है। तुममें कौनसे गुण हैं, तुम्हारा हृदय कितना महान् है, तुम्हारे विचार कैसे हैं आदि बातोंका ज्ञान दूसरोंको तुम्हारे

व्यवहारहीके द्वारा होता है। लोग देखेंगे तुम्हारे व्यवहारको, लोग देखेंगे कि तुम्हारे व्यवहारमें कितनी उदारता है उसमें कितनी सहानुभूति है, उसमें कितनी सचाई है अतएव अपने व्यवहारको सदा शुद्ध रखो।

इस समय संसारमें कुछ ऐसेभी मनुष्य हैं जो अपनेको सत्यवादी पवित्रात्मा उदार प्रसिद्ध करते हैं। वे लोगोंसे इस विषयकी चर्चा करते हैं, पर उनका व्यवहार ठीक इसके विपरीत होता है। वे छिपकर मनमानी बातें किया करते हैं और समझते हैं कि मेरी इन करतूतोंकी किसीको सूचनाभी नहीं होगी। यह मान भी लिया जाय कि वे बड़े सावधान हैं और उन्होंने अपने वाहरी आडम्बरसे अपनी बुराइयां छिपा ली, लोगोंको उसकी गन्धतक न मिलने दी। पर इससे क्या हुआ। बुरे व्यवहारोंमें अपवाद फैलनाही दोष नहीं है। बुरे व्यवहारोंको लोग जानलेंगे और हम बदनाम होजायंगे, बुरे व्यवहारोंसे केवल यही भय नहीं है। इनमें सबसे बड़ा दोष है अपने हृदय और आत्माको नीच बनाना। तुम छिपकरभी दुर्व्यवहार करतेहो तो क्या इसका प्रभाव तुम्हारे हृदयपर न पड़ेगा, क्या इससे तुम्हारा चरित्र नष्ट होनेसे बच जायगा। क्या इससे तुमको अपने व्यवहारोंसे प्रसन्न होना चाहिए? यह कुछभी नहीं हैं, तुम्हारे बुरे व्यवहार तुम्हारा नाश करेंगे, इससे दूसरोंको नफ़ा नुक़सान कुछभी नहीं है, हां इतना अवश्य है कि दूसरे तुम्हारे व्यवहारोंको बुरा समझते हैं, उनकी दृष्टिमें तुम अपने व्यवहारोंके कारण बुरे अवश्य बनजातेहो, पर उसका बुरा या भला जो कुछ फल है वह तुम्हींको भोगना पड़ता है। अतएव तुम ऐसी चतुरता मत करो।

ऐसे व्यवहारोंसे प्रसन्न मत होओ, इसको चतुरता मत समझो, यह मूर्खता है और सोभी प्रचण्ड । स्वयं अपना नाश करना है दूसरोंकी आंखें बचाकर । बतलाओ है कि नहीं । अतएव तुम इस मार्गका अनुसरण मत करो ।

तुम वैसे मार्गमें मत पैर रखो जिसमें बुराई है, तुम वैसा काम मत करो जिससे दूसरोंको कष्टहो । कहा गया है कि तुम अपनेको सुखी बना सकते हो, तुमको स्वयं सुखी बनानेका अधिकार है, पर दूसरोंको दुःख देनेका अधिकार नही है, तुम अपने मार्गको साफ सुथरा कर सकतेहो, पर दूसरोंके मार्गमें रोड़े नहीं बिछा सकते । इस बातपर सदा ध्यान रखो ।

यदि तुम समझो कि अमुक मनुष्यका व्यवहार तुम्हारे लिए अच्छा नहीं है, उस समय सावधानीसे अपना कर्तव्य निश्चित करो । यह नीति है कि पत्थरका उत्तर पत्थरसे दियाजाना चाहिए । पर यह नीति सब जगहके लिए और सब मनुष्योंके लिए नही है । इस नीतिका अवलम्बन कभी कभी करना चाहिए, जब मालुम होजाय कि दूसरी गति नहीं है, जब इसका निश्चय होजाय कि प्रतिपक्षीका पत्थर तुमको चूर चूर करदेगा, तब इस नीतिका अवलम्बन किया जाना चाहिए । सदाके लिए न तो यह नीति है ही और न इसका अवलम्बन करनाही उचित है । तुम्हारे साथ जो विरोधाचरण करे उससे तुमको अलग होजाना चाहिए और सदा उससे सावधान रहना चाहिए ।

तुम्हारा विरोधी अपनी इच्छा कब सफल करसकता है मालुम है, तुमको नीचा दिखानेकी इच्छा रखनेवाला तुम्हें कब नीचा दिखा सकता है जानतेहो । जहां तुम्हारी कमजोरी

होगी। उस प्रकृतिके जीव सदा त्रुटियां देखा करते हैं, जहां थोड़ीसी भी त्रुटि हुई कि वे अपना काम करडालते हैं। अतः तुमको सावधानीसे अपना काम करना चाहिए, जहांतक वनसके इसका प्रयत्न करो कि तुमसे त्रुटियां न होने पावें, तुम जो कार्य करो इतने विशुद्धभावसे करो कि किसीको भी उसमें कुछ कहनेका अवसरही न रहे। जब तुम अपने व्यवहारको ऐसा वनालोगे उस समय तुम्हारा विरोधी चाहे वह दुर्जनोंका चचाही क्यों न हो वह तुम्हारी कुछभी वुराई नही करसकता। वह कभी अपने काममें सफल नही होसकता। अतएव अपने प्रत्येक व्यवहारको स्वच्छ रखो। इससे हानि तो है ही नही, किन्तु लाभ है और वहभी थोड़ा नहीं। स्वच्छताही व्यवहारका मार्ग है, वही है कल्याणका श्वेत मार्ग। अतएव तुमको सदा यह वात ध्यानमें रखनी चाहिए, व्यवहारकी शुद्धताही सव शुद्धताओंका मूल है, वही सिद्धिका सहायक उपाय है।

तुमको अपने व्यवहारमें क्षमा और शान्तिका सदा उपयोग करना चाहिए, यदि तुम वलवान् हो तो क्षमा तुम्हारे लिए भूषण समझी जायगी, यदि तुम दुर्वल हो तो तुम्हारे लिए वह वल वनेगी। क्षमाशील मनुष्य सदा विजयी होता है, वह कलहसे सदाही दूर रहा करता है। क्योंकि क्षमा और कलह ये दोनों परस्पर विरोधी हैं। इससे उसकी शक्ति व्यर्थके कामोंमें नही लगती, उसके द्वारा सदाही अच्छे काम हुआ करते हैं। कुछ लोग यह समझकर क्षमा करनेसे घवड़ाते हैं कि यह हमारी कमज़ोरीका चिन्ह समझा जायगा। पर उनकी यह समझ मूर्खता और उजड्डपनका है। जो क्षमा करनेवाला , वह कमजोर है अथवा जो क्षमा नहीं करता, वह कमजोर

है इस बातपर विचार करना चाहिए। देखना चाहिए कि किसमें अधिक बल है। जो अपने विरोधी अथवा विपरीताचरण करनेवालेको क्षमा नहीं करता, इसका कारण क्या है, वह समझता है कि इसने हमारा विरोध किया है, इतना मालुम होतेही वह घबड़ा जाता है; समझता है कि इसके विरोधसे हमारा सत्यानाश होजायगा, अतएव वह विरोध करनेवालेकी शक्तिको ही नष्ट भ्रष्ट कर देना चाहता है, वह समझता है कि यदि इसकी शक्ति जीवित रही तो न मालुम वह हमको किस पातालमे भेजदे। अतएव उसको धूलमें मिला देना चाहिए। यह समझ है उनकी जो अपने विरोधियोंको क्षमा नहीं करना चाहते या नहीं जानते। पर क्षमाशीलके लिए यह बात नहीं है। वह उदारतापूर्वक अपने विरोधियोंको क्षमा करता है, क्योंकि वह समझता है कि इसके विरोध करनेसे हमारी कोई हानि नहीं, इसके विरोधसे हमारा कुछभी नहीं होसकेगा। अतएव वह अपने विरोधीकी शक्ति नष्ट करना नहीं चाहता, वह अपने विरोधीका थोड़ाभी विरोध करना नहीं चाहता, वह उसकी उपेक्षा करता है। बतलाइए दोनोंमें किसीकी शक्ति बड़ी है। जो क्षमा करता है उसकी या जो क्षमा करना नहीं जानता उसकी। यदि ऊपरकी बातें सब ठीक हैं तो आपको भी यह मानना पड़ेगा कि क्षमाशील बलवान् है।

यदि कोई तुमको अपने विरोधीके साथ विरोध करनेके लिए उसकावे, और जब तुम उसकी बातें न मानो तो वह तुमको असमर्थ बतलावे, तो समझलो, यह स्वार्थी है और तुमको अपने फन्देमें फाँसना चाहता है। तुमको ऐसे आदमियोंकी बातोंमें आकर कभीभी क्षमाका त्याग नहीं करना

चाहिए। जानतेहो क्षमा एक बहुत बड़ा शस्त्र है और उसके धारण करनेवालोंपर दुर्जनोंका कुछभी असर नहीं होता। "क्षमा शस्त्रं करे यस्य दुर्जनः किंकरिष्यति" ।

जहांतक होसके कलहसे बचो । स्वार्थ और अहङ्कारसे कलह होता है यह बात किसीसे छिपी नही है। सामान्य स्वार्थ और अहङ्कारसे प्रेरित होकर मनुष्य कलह करता है, झगड़े करनेके लिए तैयार होजाता है। पर यह मूर्खता है। कलहसे कभी किसीको लाभ हुआ है यह बात आजतक नही देखी गयी । कलह करनेवाले सदा दुःख और हानि उठाते गये हैं, इसके अनेकों प्रमाण और उदाहरण वर्तमान है। कलह करनेमें शक्तिका व्यय होता है, हृदयमें द्वेषकी मात्रा बढ़ जाती है, जिघांसा बलवती होजाती है, दोष देखनेकी प्रवृति जागृत होजाती है। इसी प्रकारके औरभी अनेक दोष उत्पन्न होजाते हैं। इन दोनोंके सामने जो लाभ होता है वह कुछभी नही है। बाज़ारमें आप कोई वस्तु ख़रीदते हैं उसके लिए आपने तेरहआने पैसे दिये वह वस्तु तेरहआनेकी होती है। उस वस्तुका मूल्य तेरहआने होता है। पर यदि तेरहआने के बदले आपको तीनपैसेके माल मिले तो क्या आप उस मालको लेना चाहेंगे। कभी नहीं, कभी नहीं । कलहकी भी यही दशा है। आप अपने विरोधीको नीचा दिखानेको जितना तत्पर होकर प्रयत्न करते है, जितना धन ख़र्च करते हैं, उतनाही यदि कहीं आप अपनी उन्नतिके लिए लगावें तो आपको बहुत अधिक लाभ होगा। फिर ऐसा काम आप क्यों करते हैं जिसमें हानि है। अपने कर्मोंसे अपनेको दुःखी क्यों बनाते हैं।

आपसी मनमुटावका एक दूसरा कारण प्रकृतिका भिन्न

 है । मनुष्योंका स्वभाव भिन्न भिन्न होता है। किसीको

कुछ पसन्द है किसीको कुछ। कोई कुछ करता है कोई कुछ। इस प्रकृति भेदका परिचय धर्मोंमेंभी देखाजाता है। जिसकी जैसी प्रकृति है जो धर्म जिसकी प्रकृतिके अनुकूल है वह उसको मानता हैं। खानेपीनेसे लेकर अन्य बड़े बड़े कामो तकमें इस प्रकृतिभेदका परिचय पाया जाना है। बात कुछ नहीं है, ऐसा होना स्वाभाविक है और इससे कुछ हानिभी नहीं। पर इस प्रकृतिभेदके कारण संसारमें बडी बड़ी लड़ाइयां हुई. बड़े बड़े युद्धहुए। आजभी हमारे छोटे छोटे कार्योंमें भी इसका प्रभाव देखाजाता है। हम धोती पहननेवाले पैजामें की निन्दा करते हैं और पैजामेंवालेसे लड़ पड़ते हैं, यही हाल पैजामेंवालोंकी भी है। लड्डू खानेवाले चाय पीनेवालोंसे लड़पड़ते हैं। कुरता पहननेवाले बालाबन्दी पहननेवालोंसे झगड़ पड़ते हैं। इन झगड़ोंमें इतनी बड़ी बड़ी बातें कहदीजाती हैं, जो सम्भवतः किसी बड़े अपराधीके लिए भी कोई मनुष्य नहीं कह सकता। बतलाइए यह क्या है, मूर्खता है कि नहीं, मिथ्या अभिमान है कि नहीं? उसकी प्रकृति जैसा उसे कहती है वैसा वह करता है, वह कोई सामाजिक नियम नहीं तोड़ता. वह कोई विप्लव उपस्थित नहीं करता। यदि एक इन सब दोषोंका दोषी होसकता है तो दूसराभी उसी दोषका दोषी है। तुमको ऐसी मूर्खता कभी नहीं करनी चाहिए। प्रकृतिभेदके कारण आपसमें युद्ध करना मूर्खता है। तुमको समझना चाहिए कि जैसे हम अपनी प्रकृतिके वशवर्ती हैं, उसी प्रकार दूसराभी होसकता है। जब तुम्हारा प्रकृतिके अधीन होना अन्याय नहीं तो दूसरेका अन्याय कैसे होसकता है। तुम अपनेको इतना ज्ञानी और अभ्रान्त क्यों समझतेहो, इन सब बातोंपर विचारकर प्रकृतिभेदके कारण तुमको किसीसे द्वेष या शत्रुता नहीं करनी चाहिए।

यदि तुम समझतेहो कि अमुक मनुष्य भूला हुआ है, वह भ्रमके कारण अपने उद्देश्यसे विचलित होरहा है, तब सबसे पहले तुम अपनी इस समझके सत्यकी परीक्षा करो। खूब सोच विचारकर देखो कि तुम ठीक समझतेहो कि नहीं, तुम्हारी समझसे 'अन्य विद्वान् सहमत हैं कि नहीं, जीवित और मृत विद्वानोंकी उक्तियां तुम्हारे अनुकूल हैं कि नहीं । इन बातोंका निश्चय करो। निश्चय होजानेपर उसे ठीक रास्तेपर लानेके लिए परिस्थिति और समयके अनुकूल जो उपाय तुमको ठीक मालुम पड़े उसको काममें लाओ । यह प्रकृति भेदकी भिन्नता नहीं है। इसमें युद्धभी नहीं होगा। इसमें कलह होनेका भय नहीं रहेगा। क्योंकि तुम्हारा कोई स्वार्थ नहीं है।

ये सब बातें तुम्हारे व्यवहारसे सम्बन्ध रखनेवाली हैं। इनकी ओर उपेक्षाकी दृष्टि नहीं देनी चाहिए ' क्योंकि इनकी ओर उपेक्षा करनेसे संसारही कटीला होजाता है । फिर जीवनकी सिद्धि कैसे मिलेगी, फिर तुम्हारा जीवन सफलभी कैसे होगा। अतएव अपने व्यवहारको सदाशयता सहृदयता दया आदिसे पूर्ण तथा दम्भ अहङ्कार कपट आदिसे शून्य बनाना चाहिए। व्यवहारही पर तुम्हारा परिचय निर्भर है, तुम कौनहो तुम्हारा हृदय कैसा है यह बात लोग तुम्हारे व्यवहारसे जानेंगे। तुम अपने गुणोंको शब्दोंसे प्रकट मत करो किन्तु कार्यसे। तुम जो करो शुद्ध होकर सत्यभावसे प्रेरित होकर करो, वचन मन और शरीरको सदा शुद्ध रखो। भगवान बुद्धके इस उपदेशको सदा स्मरण रखो। शत्रुको मित्रतासे जीतो और असाधुको साधुतासे ॥

उपसंहार ।

इस पुस्तकमें इस बातकी चर्चा कीगयी है कि जीवन संग्राममें सिद्धि कैसे प्राप्त होती है। सिद्धिप्राप्त होनेके प्रायः समस्त स्थूल साधनों पर कुछ न कुछ विचार किया गया है। अन्तमें थोड़ीसी बातें कहनी हैं। यहां हम किसी अन्य नये विषयपर विचार नहीं करेंगे, और न अपनी कही हुई बातोंको दोहरायेहींगे। किन्तु उन्हींसे सम्बन्ध रखनेवाली कुछ अन्य बातें कहेंगे।

प्रत्येक मनुष्य समाजका अङ्ग है और वह श्रेष्ठचेतन है, इसलिए उसको इन दोनों बातोंपर ध्यान रखकर काम करना चाहिए।

अपने उद्देश्यको बड़ी दृढ़तासे साधन करना चाहिए उसकी उपेक्षा करना आत्मघात करनेके बराबर है। जो तुम अपने लिए अच्छा समझतेहो वही दूसरोंके लिए भी समझो यही धर्मका तत्व है।

तुम यदि अपने लिए सुख चाहतेहो तो क्या कारण है कि तुम दूसरोंको दुःखी बनानेका प्रयत्न करो।

अपनी शक्तिबल विद्या आदिका गर्व मत करो।

किसीपर भी अनुचित दबाव मत डालो।

किसी अवस्थामेंभी अनुचित लाभ उठानेका प्रयत्न मत करो।

दुःखसे पीड़ित मनुष्योंसे अनुचित लाभ मत उठाओ।

सदा दुःखियोंकी रक्षा करो।

साहस कभी मत छोड़ो।

निराश होना पाप है ।

दृढ़तासे उद्योग करना धर्म है ।

कठिनाइयोंसे डरकर बैठ जाना कायरता है ।

सबसे प्रेमपूर्वक वर्ताव, करो किसीको भी भय न दिखाओ सदा प्रसन्न रहनेका सबसे मुख्य उपाय है अपने हृदयको शुद्ध रखना ।

दूसरोंका अभ्युदय देखकर प्रसन्न होओ, जलो मत । अच्छे कामोंके लिए वीरता और बुरे कामोंके लिए कायरता दिखानाही सज्जनोंका काम है ।

सत्यको अपना आदर्श बनाओ, क्योंकि वह जीवनसिद्धिका सबसे बड़ा प्रधान साधन है ।

विपत्तिके समयमें धीरताका परिचय दो, जिसे देखकर तुम्हारे शत्रुभी तुम्हारी प्रशंसा करें ।

दुष्टताका उत्तर प्रेम और दयासे दो ।

तुम भला आदमी हो इसलिए भले आदमियोंसेही व्यवहार रखो ।

बुरे आदमियोंसे सदा दूर रहनेका प्रयत्न करो ।

बुरे मार्गसे लाभ भी हानिकारीही है ।

ढोंगी मत बनो, अपने पापोंको छिपा कर जनसमाजको धोखा मत दो ।

बड़ोंमें श्रद्धा और विश्वास रखो उनकी उचित आज्ञाओंका पालन करो ।

सदा नयी और अच्छी बातोंको सीखा करो ।

बिना प्रमाणके किसीभी बातको सत्य मत मानो ।

सबका आदर करो, सबको अपना समझो ।

सत्य रक्षाके लिए कष्टोंका सहना धर्म है ।

कभी भी विश्वासघात मत करो।

तुम फलके लिए उत्कण्ठित मत होओ, तुमको सदा व्यापार करते रहनेका अधिकार है।

स्वार्थके लिए धर्म और सत्यको नष्ट मत करो।

अपने स्वार्थको समाजके स्वार्थसे सदा छोटा समझो।

आलस पाप है उससे दूर रहो।

काम करो, अपनी बहादुरी काम करके बतलाओ, शब्दोंसे नहीं क्योंकि वैसा करनेसे तुम्हारी हँसी होगी।

विघ्नोंसे मत डरो, वे तुम्हारी सिद्धिके चिन्ह हैं। अनर्थक किसीसे भी शत्रुता मत करो।

प्रेमका चिन्ह त्याग है, अतएव जिससे तुम प्रेम करना चाहते हो पहले उसके लिए त्याग करो।

उत्साहसे हृदय बलवान रहता है, अतएव तुमको सदा उत्साही बना रहना चाहिए।

जो काम प्रारम्भ करो अपने बलके भरोसे प्रारम्भ करो और अपने अपराधियोंको क्षमा कर दिया करते हैं।

वही मनुष्य बड़ा होता है जो अपना प्रत्येक काम तत्परता और नियमसे करता है।

सदाचार धर्मका प्रधान अङ्ग है अतएव अपनेको सदाचारी बनानेका प्रयत्न करो।

मित्रोंसे विवाद मत करो, इससे कुफल होता है। सन्तुष्ट हो, पर काममें लगेरहो।

तुम अपने प्रत्येक कामसे सर्वसाधारणको लाभ पहुंचानेका ध्यान रखो।

वह काम मत करो जिससे किसीको हानि हो।

आमदनीसे अधिक ख़र्च मत करो।

खुशामदी खून चूसनेवाले होते हैं उनसे अलग रहो, खराब और बदनाम होजाओगे।

सदा और सबसे अच्छी बातें ग्रहण करो।

तुम अपनेको ऐसा बनाओ जिससे तुम्हारे द्वारा लोगोंका भला हो, तुम संसारके लिए उपयोगी प्रमाणित हो सको।

अपना तिरस्कार कभी मत करो, अपना तिरस्कार करनेवाला सदा दुःखी रहा करता है।

सदा कल्याण चाहते रहो।

अपनेको अयोग्य मत समझो। यदि तुम्हारी बुद्धि तीव्र नही है तौभी कोई हानि नहीं, प्रत्यत्न करो, प्रयत्न करनेसे अयोग्यता दूर होजायगी और तुम सफल हो जाओगे।

किसीका भी अनुकरण मत करो। यह कोई बात नही है कि एक आदमीको अमुक काम करनेसे लाभ हुआ है तो तुमको भी होगा।

जो कार्य प्रारंभ करो अपनी शक्ति और बलके अनुकूल करो।

मज़दूरी करना निन्दित नही है, निन्दित है धोखादेना, झूठ बोलना, विश्वासघात करना आदि।

अवसर मत चूको, पछुताना पड़ेगा।

सदा इन बातोंको ध्यानमें रखो, आत्मविश्वास और आत्मसम्मान सिद्धिके मूलमन्त्र हैं। अतएव आत्मविश्वासी बनो, आत्मसम्मानकी प्रतिष्ठा करो। उदार बनो, सदाचारी और शुद्धात्मा बनो, समझ बूझकर काम प्रारम्भ करो, तत्पर होकर काम करो, वाधाविघ्नोंको बलसे हटाओ। सिद्धि अवश्य मिलेगी। भ्रान्तविश्वास नास्तिकता है और सिद्धिप्राप्तिका वाधक है अतएव उसको हटाओ। प्रसन्न रहो, कामसे न ऊबो, निराश मत होओ।

॥ इति ॥